ओ३म्

सत्यार्थ सौरभ

मासिक

नवम्बर-२०२२

नवम्बर-२०२२ ◆ वर्ष ११ ◆ अंक ०७ ◆ उदयपुर

ब्रह्म शक्ति और राजशक्ति में सामंजस्य अति आवश्यक

श्रम और वितरण के देवों का होवे वंदन, परमावश्यक

सत्यार्थ प्रकाश को पढ़ के देखो इसी भाव का वह विस्तारक

शारीरिक, आत्मिक और सामाजिक उन्नति को समर्पित

श्रीमद्दयानन्द सत्यार्थ प्रकाश न्यास

नवलखा महल परिसर, गुलाब बाग, महर्षि दयानन्द मार्ग,
उदयपुर–313001 (राज.)

₹ १५ १३३

अच्छी सोच
अच्छा खाना आपको स्वस्थ और कामयाब बनाता है।
MDH
मसाले
सेहत के रखवाले
असली मसाले सच - सच
पद्मभूषण
महाशय धर्मपाल जी
संस्थापक चेयरमैन, एम.डी.एच. (प्रा०) लि०
Garam masala
Chunky Chat masala
Chana masala
Kitchen King
Shahi Paneer
PEACOCK
KASOORI METHI
Achari Aloo masala
अचारी आलू मसाला
Veg Biryani masala
वेज बिरयानी मसाला
Karahi Paneer masala
कढ़ाही पनीर मसाला
DEGGI MIRCH
CHILLI POWDER
For More Information Visit us on :
mdhspicesofficial
mdhspicesofficial
mdhspicesofficial
SpicesMdh
www.mdhspices.com
SCAN FOR MDH ORIGINAL RECIPES

सत्यार्थ प्रकाश की शिक्षाओं को अपने आँचल में समेटे, सम्पूर्ण परिवार के लिए, हर आयु समूह के लिए, पठनीय और समर्पित

न्यास का मासिक मुखपत्र

सत्यार्थ सौरभ

प्रमुख संरक्षक - सत्यार्थ सौरभ
डॉ. सुखदेव चन्द सोनी (अमेरिका)

परामर्शदाता संपादक मण्डल
डॉ. महावीर मीमाँसक
आचार्य वेदप्रकाश श्रोत्रिय
डॉ. ज्वलंत कुमार शास्त्री
डॉ.सोमदेव शास्त्री
डॉ. रघुवीर वेदालंकार
आचार्य वेदप्रिय शास्त्री

सम्पादक
अशोक आर्य

प्रबन्ध सम्पादक
भवानी दास आर्य

प्रबन्ध सहयोग (ग्राफिक्स डिजाईनर)
नवनीत आर्य (मो.9314535379)

व्यवस्थापक
भँवर लाल गर्ग

सहयोग ◆	भारत	विदेश
संरक्षक	- 11000 रु.	$ 1250
आजीवन	- 1500 रु.	$ 300
पंचवर्षीय	- 600 रु.	$ 125
वार्षिक	- 150 रु.	$ 30
एक प्रति	- 15 रु.	$ 10

भुगतान राशि धनादेश/चैक/ड्राफ्ट श्रीमद् दयानन्द सत्यार्थ प्रकाश न्यास के पक्ष में बना न्यास के पते पर भेजें। अथवा यूनियन बैंक ऑफ इण्डिया मेन ब्रांच दिल्ली गेट, उदयपुर
खाता संख्या : 310102010041518
IFSC CODE- UBIN 0531014
MICR CODE- 313026001
में जमा करा अवश्य सूचित करें।

सृष्टि संवत्
१९६०८५३१२३
कार्तिक शुक्ल चतुर्दशी
विक्रम संवत्
२०७९
दयानन्दाब्द
१९८

November - 2022

समाचार २८ / हलचल २९

०४	वेद सुधा
०६	सत्यार्थ मित्र बनें
१२	आर्यसमाज की अपूर्वता
१५	गुरु और गुरुडम
१७	वर्तमान जन्म पूर्वजन्म का पुनर्जन्म
१९	सत्यार्थप्रकाश पहेली- ०९/२२
२०	राष्ट्र रक्षा के वैदिक साधन
२५	कथा सरित- भगत सिंह
२६	पुरुषार्थ की महिमा
२७	स्वास्थ्य- बस एक गोली ....
३०	ईश्वर और ईश्वरकृत पुस्तक ......

सत्यार्थ-सौरभ में प्रकाशित लेखों में व्यक्त विचार सम्बन्धित लेखक के हैं। सम्पादक अथवा प्रकाशक का उनसे सहमत होना आवश्यक नही है। किसी भी विवाद के प्रतिवाद हेतु न्यायक्षेत्र उदयपुर ही होगा। आपत्ति की अवधि प्रकाशन तिथि से एक माह के भीतर ही मानी जायेगी।

विज्ञापन शुल्क (प्रति अंक)

कवर 2 व 3 (भीतरी आवरण) रंगीन 5000 रु.

अन्दर पृष्ठ (श्वेत-श्याम)

पूरा पृष्ठ (श्वेत-श्याम)	3000 रु.
आधा पृष्ठ (श्वेत-श्याम)	2000 रु.
चौथाई पृष्ठ (श्वेत-श्याम)	1000 रु.

स्वामी श्रीमद् दयानन्द सत्यार्थप्रकाश न्यास, नवलखा महल, गुलाब बाग, उदयपुर | **वर्ष - ११** | **अंक - ०७** | **मुद्रण** द्वारा - चौधरी ऑफसेट, (प्रा.लि.) ११-१२, गुरु रामदास कॉलोनी, उदयपुर

प्रकाशक
श्रीमद् दयानन्द सत्यार्थप्रकाश न्यास
सत्यार्थ प्रकाश भवन, नवलखा महल, गुलाबबाग, उदयपुर (राजस्थान) 313001
(0294) 4017298, 09314535379, 7976271159
www.satyarthprakashnyas.org, E-mail : satyarthsandesh@gmail.com

स्वत्वाधिकारी, श्रीमद् दयानन्द सत्यार्थप्रकाश न्यास, उदयपुर की ओर से प्रकाशक, मुद्रक अशोक कुमार आर्य द्वारा चौधरी ऑफसेट प्रा. लि., 11/12 गुरुरामदास कॉलोनी, उदयपुर से मुद्रित तथा कार्यालय श्रीमद् दयानन्द सत्यार्थप्रकाश न्यास, सत्यार्थ प्रकाश भवन, नवलखा महल, गुलाबबाग, महर्षि दयानन्द मार्ग, उदयपुर-313001 से प्रकाशित, सम्पादक-अशोक कुमार आर्य

ओ३म्

वेद सुधा

अपने आत्मा की आवाज सुनो

यदाकूतात्समसुस्त्रोद्धृदो वा मनसो वा सम्भृतं चक्षुषो वा।
तदनु प्रेत सुकृतामु लोकं यत्रऽऋषयो जग्मुः प्रथमजाः पुराणाः।। - यजुर्वेद १८/५८

यत् आकूतात्- जो संकल्पयुक्त, हृदः वा- हृदय से अथवा, मनसः- मन से, मनन से, वा चक्षुषः- अथवा आँख से, सम्+असुस्त्रोत्- भली प्रकार निकले, वा- अथवा [उपर्युक्त शक्तियों से], सम्भृतम्- अच्छी प्रकार धारण किया गया हो, तत् अनु- उसके अनुकूल, प्र+इत- उत्तम रीति से चलो, सुकृताम् उ- [इससे तुम] शुभ कर्म करनेवालों की ही, लोकम्- अवस्था को [प्राप्त करोगे], यत्र- जहाँ, प्रथमजाः- प्रधान, प्रथमोत्पन्न, पुराणाः- पुराने, ऋषयः जग्मुः- ऋषि गये हैं।

व्याख्या

साक्षात्कृतधर्माण ऋषयो बभूवुः। - नि. अ. १/२०

'जिन्होंने धर्म का= पदार्थों का अथवा पदार्थों के वास्तविक गुणादिक का साक्षात्कार= असन्दिग्ध ज्ञान प्राप्त कर लिया है, वे ऋषि कहलाते हैं।'

हमारे शास्त्रों में साक्षात्कार पर बहुत बल दे रक्खा रहा है। जैसाकि याज्ञवल्क्य ने अपनी पत्नी को कहा-

आत्मा वा अरे द्रष्टव्यः श्रोतव्यो मन्तव्यो निदिध्यासितव्यो मैत्रेयि।। - बृहदारण्यकोपनिषद् ४/५/६

अरे मैत्रेयि! आत्मा का साक्षात्कार करना चाहिए, उस साक्षात् के लिए, श्रवण, मनन तथा निदिध्यासन करना चाहिए। साक्षात्कार के बिना किसी वस्तु का यथार्थ कथन कोई कर ही नहीं सकता।

वेद में भी प्रश्न है-

को ददर्श प्रथमं जायमानमस्थन्वन्तं यदनस्था बिभर्ति। - ऋग्वेद १/१६४/६

'जो हड्डी-रहित हड्डियों के ढाँचे को धारण कर रहा है, उस प्रथम उत्पन्न होने वाले [शरीर धारण करनेवाले] मुखिया का कौन साक्षात्कार करता है?'

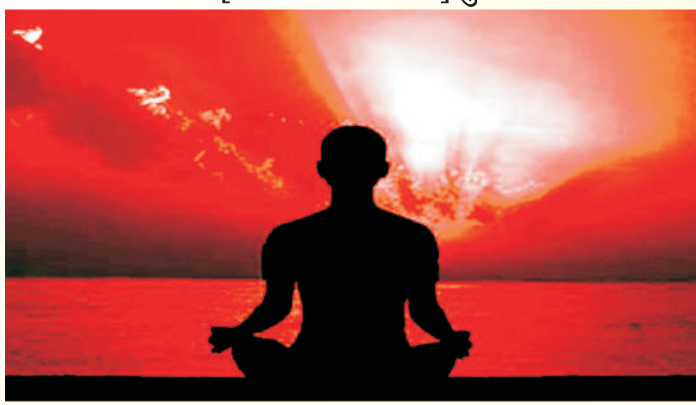

दूसरे स्थान [ऋग्वेद १०/१७७/३] में कहा-

अपश्यं गोपामनिपद्यमानम्।

'मैं अविनाशी आत्मा का साक्षात्कार करता हूँ।'

इस प्रकार वेद एवं वैदिक शास्त्र साक्षात्कार पर बहुत बल देते हैं।

यह सदा स्मरण रखना चाहिए कि साक्षात्कार के साधन- श्रवण, मनन तथा निदिध्यासन बताये गये हैं।

प्रत्येक मनुष्य का कर्तव्य है कि वह धर्म का साक्षात्कार करे, क्योंकि साक्षात्कार से मनुष्य उत्तम गति प्राप्त करना चाहते हैं। ऋषि जिस गति को प्राप्त करते हैं, वह 'सुकृताम् लोकः'= सत्कर्म करनेवालों का लोक है।

वेद ने यहाँ एक सूक्ष्म संकेत किया है कि उत्तम गति की प्राप्ति के लिए ऋषित्व के साथ सुकृत भी होना चाहिए, यर्थाथज्ञान के साथ उत्तम कर्म भी होना चाहिए। अकेले कर्म से या अकेले ज्ञान से उत्तम गति का मिलना असम्भव है, किन्तु सत्कर्म और यथार्थज्ञान प्राप्त कहाँ से हो? इसके समाधान में कहा जाता है-

धर्म जिज्ञासमानानां प्रमाणं परमं श्रुतिः। - मनु. २/१३

'धर्म के जिज्ञासुओं के लिए श्रुति परम प्रमाण है।'

अच्छा, जिनकी श्रुति में गति न हो, वे क्या करें? धर्मशास्त्रकार स्मृति को उनका सहारा बताते हैं। कोई बोल पड़ता है-

श्रुतयो विभिन्नाः स्मृतयाऽपि भिन्नाः नैको मुनिर्यस्य वचः प्रमाणम्।

श्रुतियों में भेद है [कहीं ब्रह्मचर्य है, कहीं गृहस्थ का उपदेश है, कहीं अहिंसा का आदेश है, तो कहीं मारकाट का सन्देश है], स्मृतियाँ भी एक-जैसी बात नहीं कहतीं, अतः साधारण मनुष्य की बुद्धि में यही आता है कि किसी ऋषि-मुनि की बात नहीं माननी चाहिए। तब किसकी बात मानें? उत्तर है-

'महाजनो येन गतः स पन्थाः'।

महाजन (बड़े लोग) जिस मार्ग से जाए, वही मार्ग है, वही माननीय है।

किन्तु संसार में इस समय अनेक मत (पन्थ) हैं। प्रत्येक का महाजन अपना है। कोई अहिंसा का धर्म बतलाता है, कोई प्राणिघात को पुण्य बतलाता है। ऐसी अवस्था में किसकी बात मानें? ऐसी अवस्था में जो कुछ अपना हृदय कहे, वह मानना और करना चाहिए। मनुजी ने भी धर्म के चार लक्षण बताते हुए लिखा है-

'श्रुतिः स्मृतिः सदाचारः स्वस्य च प्रियमात्मनः'।

'श्रुति (वेद), स्मृति, सदाचार (श्रेष्ठ पुरुषों का आचार) और अपने मन को जो प्रिय लगे।'

मनु ने **'स्वस्य च प्रियमात्मनः'** लिखा है। वेद ने बहुत पहले इसको खोलकर कहा-

यदाकूतात्समसुस्त्रोद्धदो वा मनसो वा सम्भृतं चक्षुषो वा।

'जिसके लिए संकल्प उठे, हृदय और मन साथ दें; आँख आदि ज्ञानेन्द्रियाँ भी उसकी सहायक हों।'

'स्वस्य च प्रियमात्मनः' अपने मन को जो प्रिय लगे। किसी के मन को दूसरे के प्राण लेना प्यारा लगता है। क्या वह वैसा कर ले? वेद ने जो कुछ कहा है, उससे प्रतीत होता है कि वेद का ऐसा अभिमत नहीं, क्योंकि वेद हृदय, मन और संकल्प- इन सबकी अनुमति का आदेश कर रहा है। जब मन से पूछते हैं, क्या यदि तुम्हारी हत्या कर दी जाए, तो तुम्हें पसन्द होगा? इस पर मन में झिझक पैदा होती है। वेद के इस आशय को लेकर नीतिकार कहते हैं-

आत्मनः प्रतिकूलानि परेषां न समाचरेत्।

'जो अपने को अप्रिय है, वह दूसरों के लिए भी न करे।'

अर्थात् अपनी आत्मा की आवाज अवश्य सुने और तदनुकूल करे भी, किन्तु विवेकपूर्वक।

संकलन कर्त्ता एवं भाष्यकार- स्वामी वेदानन्द तीर्थ
साभार- स्वाध्याय-सन्दीप

विश्व भर से आने वाले पर्यटकों के नवलखा महल, उदयपुर के बारे में विचार

नवलखा महल में बहुत ही सुन्दर ढ़ंग से महर्षि दयानन्द सरस्वती जी का चरित्र चित्रण किया गया है। बहुत ही अद्भुत थियेटर द्वारा क्रान्तिकारी एवं शिक्षाप्रद फिल्म दिखाया जाना सुन्दर और अच्छी पहल है जो हमारी आने वाली पीढ़ी के लिए प्रेरणास्रोत साबित होगी। यहाँ से जो भी कार्यक्रम चल रहा है वो सराहनीय है। आपसे एक विनम्र निवेदन है कि सत्यार्थ प्रकाश या ऋषि दयानन्द का चरित्र चित्रण का एक बोर्ड अवश्य लगवा दें जिससे इसका प्रचार-प्रसार और बढ़े। किसी भी ऑटो वाले से पूछने पर वो अभी यहाँ के बारे में पूरी जानकारी न होने के कारण सही बात नहीं बताता। इस स्थान को उदयपुर आने वाले सारे पर्यटकों को अवश्य दिखाना चाहिए।

– अजयवीर सिंह आर्य, सहारनपुर

आज हमने नवलखा महल देखा जो कि बहुत ही सुन्दर है। महर्षि दयानन्द के जीवन, देश के वीर क्रान्तिकारियों के एवं भारतीय संस्कृति के बारे में बहुत अच्छी एवं सारगर्भित जानकारी प्राप्त हुई। नई पीढ़ी के लिए बहुत प्रेरणास्रोत है प्रत्येक युवावर्ग को एक बार इस स्थान को अवश्य देखना चाहिए। आर्यावर्त्त चित्रदीर्घा बहुत ही सुन्दर तरीके से बनी हुई है। अलग-अलग राज्यों को दर्शाते हुए १६ संस्कारों की विस्तृत जानकारी आज हमने प्राप्त की जो पहले हमें नहीं थी। इस प्रकल्प के द्वारा सारी जानकारी प्राप्त करके बहुत अच्छा महसूस हो रहा है। सभी को यहाँ आकर एक बार इस स्थान को अवश्य देखना चाहिए।

– मोहन सिंह, दिल्ली

सत्यार्थ मित्र बनें

न्यास के कार्यों को गति प्रदान करने के लिए 5100 रु. (पाँच हजार एक सौ) वार्षिक का सहयोग प्रदान करें।

संस्कार वीथिकास्थ (उपनयन संस्कार)

आपका मात्र ५१०० रुपये वार्षिक का सहयोग न्यास के कार्य को अद्वितीय गति प्रदान कर सकता है।

हमारे अत्यन्त आत्मीय बन्धुजन!

इस अपील को मेरी व्यक्तिगत अपील कहिए अथवा न्यास की अपील समझिए। यह आप तक पहुँचे और आपकी आत्मीयता हमें प्राप्त हो, इसी नाते हम प्रथम बार अर्थ सहयोग का निवेदन कर रहे हैं।

आपको यह जानकारी होगी ही कि नवीन, आकर्षक प्रकल्पों का निर्माण कर न्यास सहस्रों लोगों तक वैदिक संस्कृति के मूल तत्त्वों को अग्रप्रसारित कर रहा है। सत्यार्थ प्रकाश भवन, नवलखा महल, उदयपुर द्वारा आर्यावर्त्त चित्रदीर्घा में वेद, वेद के प्रादुर्भाव, भारतीय ऋषियों के योगदान, योगिराज श्री कृष्ण और भगवान राम के पावन जीवन–चरित्र, मेवाड़ की माटी के गौरव महाराणा प्रताप, आर्यसमाज के रत्नों, भारत को स्वतन्त्रता दिलाने वाले क्रान्तिकारियों, सत्यार्थ प्रकाश चित्रावली एवं महर्षि दयानन्द के जीवन चरित्र के माध्यम से व संस्कार वीथिका के माध्यम से मानव निर्माण की पूरी योजना आगन्तुकों के सामने रखी जा रही है। इस क्रम में मानों महर्षिवर की संस्कार विधि मूर्तरूप में चित्रित हो गयी है।

वहीं उच्चतम गुणवत्ता के 3D थियेटर का निर्माण कर महापुरुषों के जीवन–चरित्र का दिग्दर्शन भी कराया जा रहा है। यहाँ यह अंकित करना आवश्यक है कि मुक्त हस्त से दिए हुए उदार अर्थ के सहयोग से भव्य संस्कार वीथिका परिसर व थियेटर का निर्माण माननीय सुरेश चन्द्र जी आर्य; अहमदाबाद और माननीय दीनदयाल जी गुप्त; कोलकाता के पवित्र सहयोग से हो पाया है एवं संस्कारों का निर्माण आर्यजनों के सामूहिक सहयोग से एकत्रित धन से हुआ है। परन्तु इनको गति देने के लिए, वर्ष में सारे प्रकल्प 365 दिन गतिशील रहें, इसके लिए आवश्यक है कि कुछ लोग आगे आएँ और प्रतिवर्ष अपना योगदान दें, इसीलिए आपसे यह निवेदन कर रहा हूँ। **मैं व्यक्तिगत रूप से अनुगृहीत हूँगा अगर आप मात्र 5100 सौ रुपये प्रतिवर्ष देने का संकल्प लेंगे।** न्यास का एकाउन्ट नम्बर भी नीचे अंकित है। न्यास को प्रदत्त दान आयकर अधिनियम की धारा 80G के अन्तर्गत कर मुक्त है।

हमें आशा ही नहीं विश्वास है कि आप हमारी प्रार्थना को स्वीकार कर 5100 रुपये वार्षिक का यह अर्थ सहयोग प्रदान करने की कृपा करेंगे। **निश्चित मानिये आपके सहयोग से जो ऊर्जा और गति हमें मिलेगी वह लाखों लोगों तक वैदिक संस्कृति के उदात्त मूल्यों को सम्प्रेषित करने में मील का पत्थर साबित होगी।**

निवेदक– अशोक आर्य, अध्यक्ष–न्यास

चैक श्रीमद् दयानन्द सत्यार्थ प्रकाश न्यास के पक्ष में बना न्यास के पते पर भेजें। अथवा यूनियन बैंक ऑफ इण्डिया, मेन ब्रांच, दिल्ली गेट, उदयपुर
बैंक एकाउन्ट का विवरण :
AC. No. : 310102010041518,
IFSC CODE- UBIN 0531014,
MICR CODE- 313026001
में जमा करा कृपया सूचित करें।

जिन महानुभावों ने हमारे एक आग्रह पर न्यास को सम्बल प्रदान करने हेतु 5100 रु. (इक्कावन सौ) प्रतिवर्ष देकर सत्यार्थ मित्र बनना स्वीकार किया उनके चित्र को यहाँ हृदय से धन्यवाद प्रेषित करते हुए दे रहे हैं। बाकी साथियों के चित्र अगले अंक में दिए जायेंगे।

श्री राम किशन सिंघल
दिल्ली

श्री दीपक सिंघल
दिल्ली

श्री विकास वर्मा
दिल्ली

श्री आजाद सिंह
दिल्ली

श्रीमती रामकली सिंघल
दिल्ली

श्रीमती ऋतु सूद
चण्डीगढ़

(स्व.)डॉ. सत्यप्रकाश की स्मृति में द्वारा मधुरानी
मथुरा

श्री रोहन मित्तल
उदयपुर

Worry Invited For Ever OR Wise Investment For Ever

Marriages, from time immemorial, were considered "solemn,", a sanctity was attached to it, and it was "the very foundation of strong society".

यह टिप्पणी माननीय उच्च न्यायलय केरल की है। माननीय उच्च न्यायालय केरल की एक खंडपीठ ने विवाह-विच्छेद की एक याचिका को अस्वीकार करते हुए विवाह की पवित्रता और आज की उच्चशृंखल प्रवृत्ति पर सटीक टिप्पणियाँ की हैं, अतः इस विषय पर यह आलेख प्रस्तुत कर रहे हैं।

आज हर प्रकार के बन्धनों को तोड़ फैंकना प्रोग्रेसिव समाज का प्रतीक माना जाने लगा है। जबकि सच यह है कि जीवन का कोई भी पक्ष ऐसा नहीं है जहाँ पूर्ण स्वतंत्रता का स्वागत हो सकता है। निरपेक्ष स्वतंत्रता समाज के ताने-बाने को ध्वस्त कर देती है। इसीलिए भारतीय संविधान में भी कोई भी स्वतंत्रता Absolute नहीं है। वह स्वतंत्रता तब तक है जब तक आप दूसरे की स्वतंत्रता को बाधित न कर रहे हों। आज हम केरल उच्च न्यायालय द्वारा दिये एक निर्णय, जिसमें धारा के विपरीत जाकर न्यायाधीशों ने विवाह-विच्छेद की अनुमति नहीं दी, के प्रकाश में विवाह संस्था की नैसर्गिक अनिवार्यता पर संक्षिप्त चर्चा करेंगे। भारतीय संस्कृति में जो युवक व युवती गृहस्थाश्रम में प्रवेश करना चाहते हों उनके लिए विवाह आवश्यक है। यह शास्त्र व व्यवहार दोनों से सुस्थापित है। यह ठीक है कि समाज में समय के साथ परिवर्तन आते हैं परन्तु हमारा निवेदन यह है कि हर परिवर्तन को बिना विवेक के अथवा उस परिवर्तन द्वारा समाज पर हो रहे सकारात्मक अथवा नकारात्मक प्रभाव का बिना आकलन किये, स्वीकार कर लेना चाहिए, ऐसी मानसिकता उचित नहीं। होता यह है कि हर समाज में कुछ प्रसिद्ध व्यक्ति अपनी लोकप्रियता के कारण रोल मॉडल बन जाते हैं। जिनका अनुसरण सामान्य जन स्वभाव से करने लगते हैं और समाज में उनके आचरण की स्वीकार्यता बन जाती है। दुर्भाग्य से आज हमारे समाज में युवाओं के समक्ष सिनेमा सितारे ही रोल मॉडल के रूप में स्थापित हैं। इस बात के प्रमाण के लिए केवल यही संकेत करना पर्याप्त है कि आप सोशल मीडिया पर इनकी एक तस्वीर डाल दीजिये, शाम तक हजारों लाखों 'लाइक्स' मिल जायेंगे जबकि इसके उलट, जिनकी वजह से हम आज खुली हवा में श्वांस ले रहे हैं ऐसे, मातृभूमि पर जीवन अर्पण कर देने वाले किसी महान् हुतात्मा का चित्र डाल दीजिये, अन्तर साफ पता चल जाएगा। विडम्बना है, पर सच यही है।

इन अभिनेताओं की मानसिकता व जीवन शैली के बारे में न लिखा जाय वही ठीक है। नैतिक मूल्य नहीं, केवल धन अर्जित करना वह भी चाहे जैसे यही एकमात्र उनका ध्येय है। हाँ! इनके कतिपय अपवाद भी हो सकते हैं। आज धन की अंधी दौड़ ही समाज में व्याप्त है। नवयुवक-नवयुवतियाँ इन सितारों की तरह के कपड़े, उनकी तरह का व्यवहार, सब कुछ उनके जैसा

करना चाहते हैं। वे अनुसरण करने योग्य हैं या नहीं इस पर विशेष लिखने की आवश्यकता नहीं है, निश्चय ही वे इस योग्य नहीं हैं। अब बात अगर समाजशास्त्रियों और देश के बुद्धिजीवियों की करें तो प्रतीत यही होता है कि उन्होंने या तो इस प्रवृत्ति के सामने समर्पण कर दिया है अथवा अपने कर्तव्य से मुँह मोड़ लिया है। वैसे हमें पहली बात ही ज्यादा सही लगती है।

सृष्टि में स्त्री और पुरुष के बीच काम स्वाभाविक ही नहीं आवश्यक भी है। संतानोत्पत्ति भी इसी पर आश्रित है अतः काम के महत्त्व से न कल कोई अनजान था और न आज। फिर भी काम को नियंत्रित किया जाय या फिर उसे उद्दाम अनियंत्रित छोड़ दिया जाय, इस सोच में अन्तर आया है। भारतीय मनीषा ने सदैव वेदोक्त मार्ग का अनुसरण करते हुए काम को नियंत्रित करने में ही मनुष्य मात्र की भलाई और परिवार नामक संस्था का स्वस्थ और स्वभाविक विकास माना है। वैदिक सभ्यता में स्पष्ट है कि एक पुरुष और एक स्त्री गृहस्थ की आधारशिला विवाह के माध्यम से रखते हैं तथा स्वयं की, परिवार के सदस्यों की एवं बृहद् समाज की उन्नति हेतु आवश्यक कार्यों को प्रीतिपूर्वक सम्पन्न करते हैं, और सन्तान उत्पन्न कर उसे सुसन्तान बनाने हेतु हर सम्भव प्रयत्न करते हैं। स्पष्ट है कि भारतीय व्यवस्था में नियंत्रित काम को श्रेष्ठ माना है न कि स्वच्छंद काम को। अनुभव इसी व्यवस्था को अभीष्ट बताता है क्योंकि इन्द्रियों की तृप्ति की खुली छूट दे भी दी जाय तो भी इन्द्रियाँ कभी तृप्त नहीं होतीं। कहा है-

भोगा न भुक्ता वयमेव भुक्ता, तपो न तप्तं वयमेव तप्ता।
कालो न यातो वयमेव याता, तृष्णा न जीर्णा वयमेव जीर्णाः।।

यह तृष्णा कभी जीर्ण नहीं होती, आग पर घी डालने पर आग शान्त नहीं होती। इन्हें नियंत्रित करना ही एकमात्र उपाय है। इसी से वैदिक संस्कृति में काम को जीवन के चौथाई भाग तथा एक पुरुष और एक स्त्री के मध्य सीमित कर दिया गया। इस चौथाई भाग को भी यहाँ स्पष्ट कर दें। वैदिक मनीषा एक व्यक्ति के जीवन को चार भागों में विभाजित करती है जिन्हें आश्रम के नाम से अभिहित किया गया है। प्रथम ब्रह्मचर्य आश्रम, द्वितीय गृहस्थ आश्रम, तृतीय वानप्रस्थ और चतुर्थ संन्यास आश्रम। इसमें द्रव्य के अर्जन तथा काम सुख को जीवन के चौथाई भाग अर्थात् गृहस्थ आश्रम तक सीमित कर दिया है। बाकी तीन आश्रमों में ये दो कार्य अनुमत नहीं हैं। काम को पुनः एक पुरुष और एक स्त्री के मध्य, जो कि विवाह करते हैं, सीमित कर दिया है। यहाँ भी जो गृहस्थ केवल सन्तानोत्पत्ति हेतु काम सम्बन्ध में प्रवृत्त होता है उसी को श्रेष्ठ माना है। विवाहेतर सम्बन्धों अर्थात् व्यभिचार को पूर्णतः त्याज्य माना है।

यजुर्वेद के निम्न मन्त्र का स्वाध्याय करें-

यं ते देवी निर्ऋतिराबबन्ध पाशं ग्रीवास्वविचृत्यम्।
तं ते विष्याम्यायुषो न मध्यादथैतं पितुमद्धि प्रसूतः।
नमो भूत्यै येदं चकार।। - यजु.१२/६५

भावार्थ- इस मन्त्र में उपमालंकार है। विवाह समय में जिन व्यभिचार के त्याग आदि नियमों को स्वीकार करें, उनसे विरुद्ध कभी न चलें, क्योंकि पुरुष जब विवाह समय में स्त्री का हाथ ग्रहण करता है, तभी पुरुष का जितना पदार्थ है, वह सब स्त्री का और जितना स्त्री का है, वह सब पुरुष का समझा जाता है। जो पुरुष अपनी विवाहित स्त्री को छोड़ अन्य स्त्री के निकट जावे वा स्त्री दूसरे पुरुष की इच्छा करे, तो वे दोनों चोर के समान पापी होते हैं। इसलिये स्त्री की सम्मति के विना पुरुष और पुरुष की आज्ञा के विना स्त्री कुछ भी काम न करे। यही स्त्री-पुरुषों में परस्पर प्रीति बढ़ाने वाला काम है कि जो व्यभिचार को सब समय में त्याग दे। (महर्षि दयानन्द)

जो वेद को परमात्मा की आज्ञा मानते हैं उनके निकट तो काम सम्बन्धों में एक पतिव्रत और एक पत्नीव्रत की मर्यादा का उल्लंघन पाप ही है और जो न भी मानते हों उन्हें भी यदि सुख-शान्ति चाहिए तथा संतानों व एक स्वस्थ समाज के निर्माण में

भागीदारी चाहिए तो इस मर्यादा को भंग करने से बचना ही होगा। अन्य कोई मार्ग नहीं है।

एक बात हम यहाँ और लिख दें कि भारतीय सभ्यता से इतर लोगों की बात करें तो वहाँ भी विवाह की उपस्थिति लगभग सर्वत्र पायी जाती है। कुछ गिने चुने लघु समाज ही होंगे जहाँ विवाह की प्रथा विलुप्त होगी। काम सम्बन्धों के लिए विवाह आवश्यक माना गया है। ईसाइयों में विवाह सम्बन्धी निर्देश देखें- 'जिसने स्त्री ब्याह ली, उसने उत्तम पदार्थ पाया, और यहोवा का अनुग्रह उस पर हुआ है।' (नीतिवचन १८/२२)।

'विवाह का सब को आदर करना चाहिए। विवाह की सेज को पवित्र रखो। क्योंकि परमेश्वर व्यभिचारियों और दुराचारियों को दण्ड देगा'। - इब्रानियों १३/४

'वह हर कोई जो अपनी पत्नी को त्यागता है और दूसरी को ब्याहता है, व्यभिचार करता है। ऐसे ही जो अपने पति द्वारा त्यागी गयी, किसी स्त्री से ब्याह करता है, वह भी व्यभिचार करता है'। - लूका १६/१८

'उसने उनसे कहा, 'जो कोई अपनी पत्नी को तलाक दे कर दूसरी स्त्री से ब्याह रचाता है, वह उस पत्नी के प्रति व्यभिचार करता है। और यदि वह स्त्री अपने पति का त्याग करके दूसरे पुरुष से ब्याह करती है तो वह व्यभिचार करती है।' - मरकुस १०/११-१२

इस्लाम में स्थिति कुछ भिन्न है। परन्तु निकाह के नाम से विवाह वहाँ भी आवश्यक है। यद्यपि यह सत्य है कि उसमें अनेक पगडंडियाँ पुरुष-यौनतुष्टि के लिए बना ली गयीं हैं। परन्तु आज की तारीख में विवाह उनमें भी सर्वत्र दृष्टिगोचर होता है।

इसके पश्चात् यह प्रश्न उठता है कि आज सीमित ही सही कुछ लोग विवाह नामक संस्था को अनिवार्य और पवित्र मानने के लिए तैयार नहीं हैं। उदाहरणस्वरूप एक भारतीय अभिनेत्री ने एक नामचीन व्यक्ति के साथ सन्तान तो उत्पन्न की पर विवाह नहीं किया। अन्य ऐसी भी हैं जो भिन्न-भिन्न पुरुषों के साथ 'लिव इन' में रहीं पर सन्तान उत्पन्न नहीं की। इसके लिए उन्होंने गोद लेने का सहारा लिया। या तो वे प्रसव पीड़ा से बचना चाहती थीं अथवा देहयष्टि को अक्षुण्ण रखना चाहतीं थीं।

तो 'लिव इन' के रूप में वे 'काम तुष्टि' में कुछ भी गलत नहीं मानते। परन्तु हमारे विचार में यह स्थिति उनका तीसरा सोपान है। पहला तथा सर्वप्रथम है सहमति परन्तु अप्रसिद्ध रूप से काम सम्बन्ध। इसका दूसरा कुछ प्रसिद्ध रूप 'डेटिंग' कहलाता है। ये स्थिति जब तक चलती है तब तक चलायी जाती है इसके पश्चात् प्रसिद्धि से परन्तु विवाह किये बिना रहना 'लिव इन' कहलाता है। जहाँ एक दूसरे के लिए कोई जिम्मेदारी नहीं है। हमारा विचार है शारीरिक आकर्षण ही इसका केन्द्रबिन्दु है। जब तक साथ हैं तब तक ठीक नहीं तो किसी भी समय बिना किसी नोटिस पीरियड के दोनों में से किसी के भी द्वारा इस सम्बन्ध को समाप्त कर तुरन्त भी दूसरे 'लिव इन' की शुरूआत की जा सकती है। पर यह प्रवृत्ति भारत के लिए अत्यन्त अर्वाचीन है। भारत में विवाह द्वारा गृहस्थ के कर्तव्यों व सुखों का संधारण ही कर्तव्य रहा है और है।

वेद की व्यवस्था देखें-

अग्ना३ ।।ऽइ पत्नीवन्त्सजूर्देवेन त्वष्ट्रा सोमं पिब स्वाहा ।
प्रजापतिर्वृषासि रेतोधा रेतो मयि धेहि प्रजापतेस्ते वृष्णो रेतोधसो रेतोधामशीय।। - यजुर्वेद ८/१०

भावार्थ- इस संसार में मनुष्यजन्म को पाकर स्त्री और पुरुष ब्रह्मचर्य्य, उत्तम विद्या, अच्छे गुण और पराक्रमयुक्त होकर विवाह करें। विवाह की मर्यादा ही से सन्तानों की उत्पत्ति और रतिक्रीड़ा से उत्पन्न हुए सुख को प्राप्त होकर नित्य आनन्द में रहें। विना विवाह के स्त्री-पुरुष वा पुरुष-स्त्री के समागम की इच्छा मन से भी न करें। जिससे मनुष्यशक्ति की बढ़ती होवे, इससे गृहाश्रम का आरम्भ स्त्री-पुरुष करें। (महर्षि दयानन्द)

प्रारम्भ में स्वच्छन्द सम्बन्धों को न तो समाज से और न ही कानून से प्रश्रय प्राप्त था। अविवाहित स्त्री पुरुषों का सम्बन्ध सदैव अस्वीकार्य रहा है। परन्तु तब ऐसे स्वच्छन्द लोग होते भी थे तो गिनती के होते थे। अब अपने रोल मॉडल के अनुकरण में यह प्रचलित होता जा रहा है और सबसे भयावह यह है कि आज फिल्मों और टीवी के माध्यम से इस प्रकार के सम्बन्धों का सहजीकरण किया जा रहा है। डेटिंग, बॉय फ्रेंड, गर्लफ्रेंड जैसे शब्द घर-परिवार की चर्चा में घुसा दिए गए हैं। इस सब का दुष्परिणाम प्रत्यक्ष दिखायी दे रहा है। रही सही कसर न्यायालयों ने पूरी कर दी है।

आज धीरे-धीरे विभिन्न निर्णयों के माध्यम से न्यायालयों द्वारा न केवल 'लिव इन' को मान्यता दे दी गयी है, वरन् वयस्क

स्त्री-पुरुषों के मध्य काम सम्बन्धों की अबाधित स्वतंत्रता देकर 'लिव इन' के साथ Premarital sex तथा Adultry की भी इजाजत दे दी गयी है।

पायल शर्मा के मुकदमे में जस्टिस काटजू ने व्यवस्था दी कि हमारी राय में अगर कोई पुरुष तथा महिला अविवाहित रहते हुए भी अगर चाहें तो साथ रह सकते हैं, यद्यपि समाज में इसे अनैतिक माना जा सकता है परन्तु यह अवैधानिक नहीं है। कानून और नैतिकता में अन्तर है।

यहाँ हमारा तात्पर्य 'लिव इन' पर चर्चा करना नहीं है अतः इस सम्बन्ध में समय-समय पर न्यायालयों में उठी उलझनों की चर्चा नहीं करेंगे अर्थात् इसकी विशेष व्याख्या न करते हुए इतना ही कहेंगे कि वैदिक संस्कृति में काम सम्बन्ध सन्तानोत्पत्ति के लिए है और यह दृष्टिकोण अधिक गलत नहीं होगा अगर यह कहा जाय कि 'लिव इन' तथा इसी प्रकार के विवाह-पूर्व वा विवाहेतर सम्बन्ध केवल कामतुष्टि के लिए हैं, सन्तान निर्माण की कोई अवधारणा इनमें नहीं है। बल्कि सन्तानोत्पत्ति से बचने के लिए ही प्रमुखता से ऐसे सम्बन्ध किये जा रहे हैं ताकि किसी प्रकार का कोई कर्तव्य उत्पन्न न हो। जब तक मन चाहा तब तक साथ रहे और जब अलग हुए तो, विवाह में सन्तान प्रेम या सन्तान के प्रति कर्तव्यबोध बाधक बनता है परन्तु यहाँ ऐसा कोई झंझट नहीं है। सुबह उठे, अपना सामान उठाया, टाटा-बाय-बाय की और चल पड़े।

अब यहाँ एक गंभीर या कहें तो मूल प्रश्न है कि क्या इन्द्रियों की स्वाभाविक प्रवृत्तियों पर लगाम लगानी चाहिए? आज के युग में सामान्यजन तो क्या कहें देश के शीर्ष पर विभिन्न क्षेत्रों में विराजे सज्जनों का उत्तर नहीं में है। जबकि भारतीय शास्त्रों में तथा इतिहास में इसका उत्तर हाँ में मिलता है। महर्षि दयानन्द सरस्वती ने अपने कालजयी ग्रन्थ सत्यार्थप्रकाश के तृतीय समुल्लास में मनुस्मृति को उद्धृत करते हुए जितेन्द्रियता के महत्त्व को स्पष्ट रूप से स्थापित कर दिया है।

इन्द्रियाणां विचरतां विषयेष्वपहारिषु।
संयमे यत्नमातिष्ठेद्विद्वान्यन्तेव वाजिनाम्॥ - मनु. २/८८

अर्थात् जैसे विद्वान् सारथि घोड़ों को नियम में रखता है वैसे मन और आत्मा को खोटे कामों में खींचने वाले विषयों में विचरती हुई इन्द्रियों के निग्रह में प्रयत्न सब प्रकार से करें। क्योंकि-

इन्द्रियाणां प्रसंगेन दोषमृच्छ यसंशयम्।
सनियम्य तु तान्येव ततः सिद्धिं नियच्छति॥ - मनु. २/९३

अर्थात् जीवात्मा इन्द्रियों के वश होके निश्चित बड़े-बड़े दोषों को प्राप्त होता है और जब इन्द्रियों को अपने वश में करता है तभी सिद्धि को प्राप्त होता है।

वेदास्त्यागश्च यज्ञाश्च नियमाश्च तपांसि च।
न विप्रदुष्टभावस्य सिद्धिं गच्छन्ति कर्हिचित्॥ - मनु. २/९७

जो दुष्टाचारी-अजितेन्द्रिय पुरुष हैं उसके वेद, त्याग, यज्ञ, नियम और तप तथा अन्य अच्छे काम कभी सिद्धि को नहीं प्राप्त होते।

उपनिषदों कि बात करें तो कठोपनिषद् में यमाचार्य नचिकेता को आत्मा और शरीरस्थ इन्द्रियों का सम्बन्ध बताते हुए कहते हैं-

आत्मानं रथिनं विद्धि शरीरं रथमेव तु।
बुद्धिं तु सारथिं विद्धि मनः प्रग्रहमेव च॥ (कठोपनिषद्, अध्याय १, वल्ली ३, मंत्र ३)

इस जीवात्मा को तुम रथ का स्वामी समझो, शरीर को उसका रथ, बुद्धि को सारथी, और मन को लगाम समझो।

फिर अगले ही मन्त्र में कहा

इन्द्रियाणि हयानाहुर्विषयांस्तेषु गोचरान्।
आत्मेन्द्रियमनोयुक्तं भोक्तेत्याहुर्मनीषिणः॥ (कठोपनिषद्, अध्याय १, वल्ली ३, मंत्र ४)

मनीषियों, विवेकी पुरुषों ने इन्द्रियों को इस शरीर-रथ को खींचने वाले घोड़े कहा है, जिनके लिए इन्द्रिय-विषय विचरण के मार्ग हैं, इन्द्रियों तथा मन से युक्त इस आत्मा को उन्होंने शरीररूपी रथ का भोग करने वाला बताया है ।

प्राचीन भारतीय विचारकों का चिन्तन प्रमुखतया आध्यात्मिक प्रकृति का रहा है। ऐहिक सुखों के आकर्षण का ज्ञान उन्हें भी रहा ही होगा। किन्तु उनके प्रयास रहे थे कि वे उस आकर्षण पर विजय पायें। उनकी जीवन-पद्धति आधुनिक काल की पद्धति के विपरीत रही। स्वाभाविक भौतिक आकर्षण से लोग स्वयं को मुक्त करने का प्रयास करें, ऐसा वे सोचते रहे होंगे इस सबका सार

यह है कि भौतिक भोग्य विषयों रूपी मार्गों में विचरण करने वाले इन्द्रियरूपी घोड़ों पर मनरूपी लगाम के द्वारा बुद्धिरूपी सारथी नियंत्रण रखता है ।

तो यह स्पष्ट करने के लिए यथेष्ठ सामग्री हमने प्रस्तुत कर दी है कि स्त्री पुरुष के सम्बन्धों को नियंत्रित करने के लिए भारतीय मनीषा ही नहीं वेद की क्या व्यवस्था है। यही व्यवस्था न केवल स्त्री पुरुष और परिवार के लिए वरन् सम्पूर्ण समाज के लिए हितकारी है।

परन्तु समाज और समाज के नियन्ताओं की सोच आज प्रतिकूल है। न्यायिक निर्णयों की चर्चा हम कर चुके हैं। केरल उच्च न्यायलय ने अभी हाल में उक्त धारा के विपरीत एक निर्णय दिया है। यह वही उच्च न्यायलय है जिसने कुछ माह पूर्व ही कहा था कि एक विफल विवाह में आपसी सम्मति के आधार पर विवाह-विच्छेद की अनुमति न देना क्रूरता से कम नहीं। परन्तु इस बार जस्टिस ए.मुहम्मद मुस्ताक एवं जस्टिस सोफी थामस की खण्डपीठ ने क्षुद्र स्वार्थों के आधार विवाह के पवित्र बन्धन को तोड़ने से इनकार करते हुए विवाह-विच्छेद की इस प्रवृत्ति को 'यूज एण्ड थ्रो' की उपभोक्तावादी मानसिकता से प्रभावित बताया और चिन्ता व्यक्त की है कि यह प्रवृत्ति हमारे वैवाहिक सम्बन्धों को प्रभावित कर रही है। न्यायपीठ ने यहाँ तक कहा कि आज की पीढी सोचती है कि विवाह एक बुराई है और वे इसका परित्याग कर बिना किसी जिम्मेदारी के मुक्त जीवन का आनन्द ले सकते हैं। पीठ ने कहा कि आज की पीढ़ी **Wife** का अर्थ **Worry Invited For Ever** निकालती है जबकि यह **Wise Investment For Ever** होना चाहिए जैसा कि प्राचीन पीढ़ी मानती थी। न्यायालय ने यह भी कहा कि आज 'लिव इन' रिलेशन की संख्या बढ़ती जा रही है क्योंकि उसमें जब चाहे तब अलविदा कहा जा सकता है। न्यायाधीशों की निम्न टिप्पणी आज के समाज की और इसमें चरमराती जा रही विवाह संस्था की और उसके समाज पर कुप्रभाव की अत्यन्त सटीक व्याख्या करती है

"The wails and screams coming out of disturbed and destroyed families are liable to shake the conscience of the society as a whole- When warring couples, deserted children and desperate divorcees occupy the majority of our population, no doubt it will adversely affect the tranquility of our social life, and our society will have a stunted growth."

वस्तुतः कहा यही जाता है कि आज की पीढ़ी गृहस्थ के दायित्वों के कारण और उसके टूटने की काल्पनिक सम्भावना के कारण विवाह से विरक्त हो रही है। होना यह चाहिए कि दम्पति को उन सूत्रों का गहराई से पालन करना चाहिए जिससे जरावस्था पर्यंत स्वर्ग के सामान सुख गृहस्थ में प्राप्त होता रहे और सन्तान एक स्वस्थ वातावरण में उन्नति को प्राप्त करें। निम्न वेदादेश को एक बार हृदयंगम अवश्य करें -

गृहा मा बिभीत मा वेपध्वमूर्जं बिभ्रतऽएमसि ।
ऊर्जं बिभ्रद्वः सुमनाः सुमेधा गृहानैमि मनसा मोदमानः ।। - यजुर्वेद ३/४१

...... किसी मनुष्य को गृहास्थाश्रम के अनुष्ठान से भय नहीं करना चाहिये, क्योंकि सब अच्छे व्यवहार वा सब आश्रमों का यह गृहस्थाश्रम मूल है। इस गृहस्थाश्रम का अनुष्ठान अच्छे प्रकार से करना चाहिये और इस गृहस्थाश्रम के विना मनुष्यों की वा राज्यादि व्यवहारों की सिद्धि कभी नहीं होती। (महर्षि दयानन्द)

ताऽअस्य सूददोहसः सोमꣳश्रीणन्ति पृश्नयः ।
जन्मन्देवानां विशस्त्रिष्वा रोचने दिवः ।। - यजुर्वेद १२/५५

भावार्थ- जब अच्छी शिक्षा को प्राप्त हुए युवा विद्वानों की अपने सदृश रूप और गुण से युक्त स्त्री होवें, तो गृहाश्रम में सर्वदा सुख और अच्छे सन्तान उत्पन्न होवें। इस प्रकार किये विना संसार का सुख और शरीर छूटने के पश्चात् मोक्ष कभी प्राप्त नहीं हो सकता।

- अशोक आर्य
सत्यार्थ प्रकाश भवन, नवलखा महल, उदयपुर
चलभाष- ०९३१४२३५१०१, ०८००५८०८४८५

महर्षि दयानन्द के जीवन से परिचित पाठक अच्छी प्रकार से जानते हैं, कि शिव मन्दिर में घटित घटना के कारण मूल शंकर ने चौदह वर्ष की आयु में सच्चे शिव के दर्शन की प्रतिज्ञा की थी। इसके चार वर्ष के पश्चात् प्रिय चाचा की मृत्यु पर मृत्यु के रहस्य को जानने और मृत्यु विजय की भावना वाली गांठ पहली गांठ के साथ आकर और जुड़ गई। इस उलझन को सुलझाने की उधेड़-बुन के दिनों में जो भी साधु, महात्मा मूल को मिला, उसी से ही इन प्रश्नों का समाधान पूछा। मूल की बदली हुई परिस्थिति को देखकर माता-पिता ने उसके विवाह की तैयारियाँ शुरु कर दीं। तब एक दिन २१ वर्ष का मूल सायंकाल को जल का पात्र लेकर सदा के लिए घर से चल पड़ा, निकल पड़ा।

पहले शुद्ध चैतन्य ब्रह्मचारी फिर दयानन्द स्वामी बनकर गुरु की खोज में लगातार चौदह वर्ष तक मैदानों, पहाड़ों, जंगलों की खाक छानी। जहाँ कहीं किसी गुरु का पता चला, वहाँ पहुँच कर योग और शास्त्र का अभ्यास किया। अनेक घाटों पर घूमने के पश्चात् दयानन्द संन्यासी गुरु विरजानन्द जी दण्डी की कुटिया पर मथुरा पहुँचे। ढाई-तीन वर्ष अष्टाध्यायी और महाभाष्य का अध्ययन किया और साथ ही साथ योगसाधना चलती रही।

एक दिन कुछ लौंग लेकर विदाई की दृष्टि से दयानन्द गुरुचरणों में पहुँचे। विद्या प्रदान के लिए कृतज्ञता प्रकट करते हुए विदा की अनुमति माँगी। उस समय गुरु-शिष्य में जो विचार-विमर्श हुआ, उसने स्वामी दयानन्द के जीवन का काँटा ही बदल दिया।

संसार के इतिहास की, एक अभूतपूर्व घटना है, कि एक २१ वर्षीय शिक्षित युवक चौदह वर्ष लगातार भटकने के बाद एक गुरु को प्राप्त करता है। ढ़ाई-तीन वर्ष उनके चरणों में बैठकर विशेष शिक्षा प्राप्त करता है। अपनी चौदह और अठारह वर्ष की आयु में की हुई प्रतिज्ञाओं को बदल कर गुरु की आज्ञा के पालन में जुट जाता है। जिस साध की सिद्धि के लिए घर छोड़ा, लगातार सत्रह वर्ष घूमकर योग तथा शास्त्र का अभ्यास किया। जब साध सिद्धि के निकट आई, तो उसे छोड़ कर जनता जनार्दन की सेवा तथा सत्यपथ प्रदर्शन में दिन-रात एक कर दिया।

नाम विचार-ब्रह्मर्षि गुरु विरजानन्द जी की दण्डी की आज्ञा के अनुरूप आर्षज्ञान का प्रदीप लेकर जनता के अज्ञान, अन्धविश्वास को दूर करने के लिए महर्षि दयानन्द सरस्वती ने भारत में प्रचार प्रारम्भ किया।

इस आर्षज्ञान के दीपक को सदा प्रज्ज्वलित रखने के लिए विधिवत् आर्यसमाज की स्थापना बम्बई/मुम्बई में १८७५ को की। महर्षि ने अपने विशाल स्वाध्याय, विचार और पर्याप्त वर्षों के अनुभव के आधार पर प्रत्येक पहलू से सोचकर इस संगठन का नाम आर्यसमाज रखा। जो प्रत्येक प्रकार से सार्थक और उपर्युक्त है। क्योंकि आर्य शब्द जहाँ उच्चारण में सरल, श्रवण में सरस-मधुर-आकर्षक और स्पष्ट रूप से गतिशील, श्रेष्ठ अर्थवाला है, वहाँ यह शब्द भारतीय साहित्य, परम्परा से भी सम्बन्धित है। यतोहि प्राचीन भारत साहित्य में इसका प्रचुर प्रयोग किया गया है।

आर्य शब्द का प्रयोग इतना अधिक प्रभावपूर्ण और सार्वकालिक, सार्वभौम, सार्वजनीन है, कि किसी भी देश का नागरिक जहाँ कहीं, जब कभी इसका प्रयोग करना चाहे, कर सकता है। यह किसी भी दृष्टि से किसी काल एवं स्थान पर प्रतिकूल नहीं बैठता। प्रयोग करने वाले के जीवन की प्रत्येक प्रगति, आकांक्षा और भावना को यह आर्य शब्द पूरी तरह से अभिव्यक्त करता है।

उद्देश्य- संगठन के नाम में प्रयुक्त आर्य शब्द से यह भी स्वतः स्पष्ट हो जाता है, कि यह संगठन भारतीय परम्परा, साहित्य, संस्कृति धर्म में से उसी को ही स्वीकार करता है जो आर्य= श्रेष्ठ, अच्छा हो, आर्यत्व का साधक, सहायक वा एतदर्थ उपादेय हो। अतः आर्यसमाज भारतीय साहित्य, परम्परा आदि भारतीयता में से उसी का ही ग्राहक और समर्थक है। जो-जो आर्य शब्द से संगत, समन्वित है।

आर्य शब्द के इस विवेचन से स्पष्ट हो जाता है, कि आर्यसमाज केवल भारत तक सीमित नहीं है। यह एक सार्वभौम संस्था है। अतः जहाँ कहीं जो कुछ भी श्रेष्ठ है, सबके कल्याण का आधार है, वह उसका पोषक है। जैसे कि मानव जाति की भलाई की दृष्टि से जिसने भी जिस किसी क्षेत्र में कार्य किया है या कर रहा है, वह उसका प्रशंसक और सहायक है। वह विषय चाहे शरीर से सम्बद्ध, अन्न, वस्त्र, भवन, प्रशासन, चिकित्सा, शिक्षा, संचार के रूप में हो या सामाजिक, आर्थिक, राजनीतिक, धार्मिक, शैक्षणिक क्षेत्र से जुड़ा हो।

कार्य- इतिहास के पृष्ठों को पलटने से पता चलता है कि आर्यसमाज ने गत १५० वर्ष के काल में विविध क्षेत्रों में बहुत कार्य किया है। विशेषतः स्वाधीनता, समाज सुधार और शिक्षा के क्षेत्र में। एतदर्थ उन दिनों के हजारों आर्यों ने अनेक तरह के बलिदान दिए, विविध प्रकार के तप तपे, बहिष्कार सहे। उनके इन गौरवपूर्ण कृत्यों को देखकर स्वतः यह उक्ति चरितार्थ होती है, कि 'लाये हैं किश्ती तूफानों से निकाल कर'। ऐसे बलिदानों का ही यह प्रभाव है, कि आज नारी-शिक्षा, विदेश-गमन, छुआ-छूत निवारण, जात-पात के अपसारण को कोई धर्म विरुद्ध कह कर किसी प्रकार का विरोध प्रकट नहीं करता। अपितु कल तक इस दृष्टि से आर्य समाज का जो विरोध करते थे, वे स्वयं अब कन्या विद्यालय-महाविद्यालय चला रहे हैं और उनके धर्मोपदेशक एवं परिजन विदेशों में जा रहे हैं।

ऐसी स्थिति का अनुशीलन करके एक विचारशील यह सोचने पर विवश हो जाता है, कि इस अपूर्वता का क्या कारण है? इस दृष्टि से जब हम विश्लेषण करते हैं, तो हमारे सामने ऐसी चार विशेष विशेषताएँ आती हैं। वे हैं-

१. हमारे जीवन का पूर्ण रूप २. कृषिवत् सबके लिए एक मान्यता ३. सत्यात्मक या वैज्ञनिक होना और ४. सरल स्पष्ट होना।

आर्यसमाज की अपूर्वता का पहला पहलू है- इसके विचार जीवन के किसी एक क्षेत्र तक सीमित नहीं हैं। यहाँ जीवन के सर्वांगीण रूप को सामने रखकर विचार दिए जाते हैं। आर्य समाज के सिद्धान्तों में जहाँ ईश्वर, जीव, जगत् तथा उसके मूल तत्वों का विवेचन करके संसार-रचना का दार्शनिक विश्लेषण किया जाता है, वहाँ शरीर का स्वरूप, उसकी रक्षा-वृद्धि तथा सामाजिक व्यवहारों को सुन्दर बनाने की भी चर्चा होती है। अतः प्रगति की पूर्णता के लिए आर्यसमाज में जीवन की सभी जरूरतों की चर्चा होती है।

आर्यसमाज के सिद्धान्तों की दूसरी विशेषता यह है कि इसकी मान्यतायें कृषि की तरह सबके लिए एक सी रचनात्मक, स्पष्ट, प्रत्यक्ष और परिश्रम पर निर्भर हैं। अतः आर्यसमाज चमत्कारों, धार्मिक कर्मकाण्डों और फलित ज्योतिष को महत्व नहीं देता है। हाँ, धर्म के आचार पक्ष पर विशेष बल देता है। कर्म-फल व्यवस्था को आर्य संस्कृति का मूलभूत आधार मानता है।

आर्यसमाज के अनोखेपन का तीसरा कारण है- उसकी विचारधारा का वैज्ञानिक होना। विज्ञान किसी क्षेत्र की सच्चाई की खोज का नाम है। वह प्रयोगों, परीक्षणों, अनुभवों के आधार पर किसी बात की सच्चाई को कार्य-कारण की व्यवस्था से स्पष्ट करता है। जिन में कार्य-कारण व्यवस्था होती है। इससे एक यह तथ्य सामने आता है, कि आर्य समाज के सिद्धान्त किसी व्यक्ति विशेष पर निभर नहीं हैं। वे केवल मानव संस्कृति के मूलभूत तथ्यों से ही जुड़े हुए हैं। आर्य समाज सभी महापुरुषों का उनकी उपलब्धि के अनुरूप अभिनन्दन और सम्मान करता है, पर किसी व्यक्ति विशेष के आधार पर धर्म का विवेचन नहीं करता है।

आर्यसमाज की विचारधारा की चौथी विशेषता यह है कि इसके क्रियाकलाप सरल-सहज-स्पष्ट और प्रत्यक्ष लाभप्रद हैं। आज प्रत्येक व्यक्ति जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में सुख चाहता है। क्योंकि वह सुख में सुविधा, सरलता, स्पष्टता अनुभव करता है। तुलनात्मक ढंग से परखा जाए तो स्पष्ट होता है कि सुख सरल तथा सस्ता है। दुःख प्रायः कष्टदायक और महंगा होता है। जैसे कि फल मिठाईयों की अपेक्षा अधिक लाभदायक, सस्ते और सुखप्रद होते हैं। यही बात सफाई तथा स्वास्थ्य के उदाहरण से स्पष्ट होती है। ऐसे ही विलासिता, फैशन, व्यसन की चीजें महंगी, हानिकारक और दुःखदायक होती हैं। अतः आर्यसमाज का विचार है, हमारे विवाह आदि धार्मिक संस्कारों, कर्मकाण्डों, त्याहारों की प्रक्रिया आडम्बर रहित, सरल, स्पष्ट और सुखदायक हो। जिससे सभी इनको सरलता से सम्पन्न करके सुखी हो सकें। जैसे कि बड़ी-बड़ी बारातें, दावतें, बिजली की अत्यधिक जगमगाहट, बड़े-बड़े उपहारों का लेन-देन और एक के बाद एक बढ़ते ठाका, रोक, चुन्नी चढ़ाना आदि के रिवाज

बन्द होने चाहिए। सरलता और स्पष्टता की दृष्टि से ही महर्षि ने एक सरल, सर्वमान्य रूप यज्ञों और संस्कारों का दर्शाया है। वस्तुतः आज हमारे धार्मिक, सामाजिक, शैक्षणिक, राजनीतिक क्रियाकलाप महंगे और जटिल बनते जा रहे हैं। धर्म के नाम पर तीर्थों, व्रतों, पर्वों, पूजाओं और मन्दिरों को आए दिन हम महंगे से महंगा तथा जटिल से जटिल बनाते जा रहे हैं। उस पर भी उनमें एक के बाद एक रिवाज बढ़ता चला जा रहा है। आर्य

समाज की यह धारणा है कि सभी प्रकार के काल, संस्थान, शास्त्र, व्यक्ति विशेष के मोह एवं पक्षपात से ऊपर उठकर अच्छाई (आर्यता) के आधार पर प्रत्येक नियम, व्यवस्था निर्धारण करना चाहिए। क्योंकि मानव जाति की भलाई के लिए ही धर्म आदि के नियम होते हैं। अतः हमें मानव जाति के जीवन को हरा-भरा रखने के लिए उसकी जड़ को जीवित रखने वाली धार्मिक, सामाजिक, शैक्षणिक, राजनीतिक व्यवस्थायें अपनानी चाहिये। अन्यथा 'छिन्ने मूले नैव पत्रं न पुष्पम्' वाली ही बात हो सकती है। इन्हीं सारी भावनाओं को सामने रखकर महर्षि दयानन्द ने अमर सन्देश दिया है, कि 'सर्वसत्य का प्रचार कर, सबको ऐक्यमत में करा, द्वेष छुड़ा, परस्पर में दृढ़-प्रीतियुक्त कराके, सबसे सबको सुखलाभ पहुँचाने के लिए मेरा प्रयत्न और अभिप्राय है' यही सन्देश हर निणर्य की कसौटी है। आर्य समाज की इस अपूर्वता की दृष्टि से संगठन की यह स्पष्ट मान्यता है कि हमारा वैयक्तिक तथा सामाजिक जीवन सरल, सादा होना चाहिए। अतः प्रत्येक धार्मिक व्यक्ति को धूमपान, मद्यपान, मांसाहार और विषय-व्यसनों का त्याग करके शाकाहार का ही सेवन करना चाहिए। शाकाहार शरीर के स्वास्थ्य, संवर्धन, संरक्षण के लिए जहाँ अत्यन्त उपयोगी और लाभप्रद है, वहाँ मांसाहार, मद्यपान, धूम्रपान आदि व्यसन अनेक रोगों के कारण बनते हैं। इसके साथ शाकाहार, मांसाहार आदि से अधिक सस्ता तथा सरल भी है।

जैसे शाकाहार का स्वास्थ्य से सीधा सम्बन्ध है, ऐसे ही जिस धार्मिक कर्मकाण्ड अर्थात् पूजा-पाठ, जप-तप, तीर्थ-देवदर्शन आदि का जीवन तथा हृदय शुद्धि से सीधा सम्बन्ध है, उन्हीं को उसी रूप में आयोजित करना चाहिए। निरर्थक कर्मकाण्ड में समय-धर्म-श्रम का अपव्यय नहीं होना चाहिए। तभी किसी कर्म के करने का मूलभाव चरितार्थ होता है, कि महर्षि दयानन्द द्वारा स्थापित आर्य समाज महर्षि के मूल मन्तव्यों को उन्हीं की भावना के अनुरूप प्रचारित करने के कारण महर्षि का अविस्मरणीय स्मारक है। अतः महर्षि की स्मृति को चिरस्थायी बनाने के लिए और संसार को सही राह दिखाने के लिए आर्यसमाज को सक्रिय, सजीव, सक्षम, सुदृढ़ बनाना अत्यन्त अपेक्षित है।

लेखक- आचार्य भद्रसेन 'दर्शनाचार्य'
शालीमार नगर, जोधामल रोड़, होशियारपुर

पन्द्रह लाख का सात्विक दान, अनुकरणीय है ऐसा काम। नवलखा महल अब और भी दमकेगा न्यासी बन्धुओं का आपको प्रणाम।।

हमारे और न्यास के प्रति अपने हृदय में आत्मीयता और स्नेह का उमड़ता हुआ सागर लिए हुए, वेंकूवर-कनाडा में रहते हुए, विश्वभर में जहाँ कहीं भी महर्षि दयानन्द जी के विचारों से ज्योतित कोई भी संस्था कार्य कर रही है, उसे अपने उदार भावों और उदार सहयोग से पल्लवित और पुष्पित करते हुए, जो वैदिक वैजयन्ती को सतत् फहराने में संलग्न हैं और जिनके सहयोग से अनेक संस्थाएँ वैदिक संस्कृति के प्रसारण का कार्य कर रही हैं, ऐसे महनीय उदार व्यक्तित्व के स्वामी दम्पति श्रीमती मधु वार्ष्णेय और श्री हरि वार्ष्णेय से आर्य जगत् का हर व्यक्तिआज परिचित है। सन् 2007 में शिकागो सम्मेलन में हमें आपका स्नेह प्राप्त करने का सौभाग्य प्राप्त हुआ, जो आज भी उसी अक्षुण्णता के साथ अवस्थित है।

इन्हीं भावों को साथ लेकर अपने छोटे भ्राता डॉ. अशोक वार्ष्णेय के साथ आप दोनों महर्षि दयानन्द की कर्मस्थली और सत्यार्थ प्रकाश की सम्पूर्णन स्थली नवलखा महल, उदयपुर के अवलोकनार्थ पधारे। जहाँ अनेक नवाचारों के माध्यम से एक क्रान्तिकारी कार्य करने का प्रयास किया जा रहा है। न्यास राष्ट्रनायकों और पंच महायज्ञों को लेकर मनोहारी स्वरुप में सुन्दर प्रेरणा कक्ष बना रहा है, उसके निर्माण के लिए उसके सम्पूर्ण व्यय को वहन करते हुए आपने मानो अपने सहयोग की वर्षा ही कर दी। अब हम पूर्णतः निश्चिन्त हैं। आपकी कृपा से, सम्पूर्ण नवाचारों के साथ इस केन्द्र के विश्व मानवता को आकर्षित करने हेतु, दृश्यमान होने में अब कोई अवरोध नहीं है और समस्त आर्य बन्धुओं और बहनों को अतिशीघ्र गौरव से सिर उठाए नवलखा महल सांस्कृतिक केन्द्र, उदयपुर (NMCC) आह्वान करेगा।

- अशोक आर्य (अध्यक्ष)
सत्यार्थ प्रकाश भवन, नवलखा महल, उदयपुर
चलभाष- ०९३१४२३५१०१, ०८००५८०८४८५

गुरु और गुरुडम

गुरु वह है जो शिष्य को अज्ञान (अंधकार) असत्य से ज्ञान (प्रकाश) सत्य की ओर ले जाए तथा सत्य ज्ञान का बोध कराकर ईश्वर दर्शन करा दे। गुरु (आचार्य) हमें ज्ञान देता है, वह हमें जीवन जीने की राह बताता है। अच्छी शिक्षा ज्ञान के लिए जीवन में सदगुरु का होना जरूरी है। वह पूजनीय है, श्रद्धेय है, लेकिन स्वयंभू (भगवान) साक्षात् परब्रह्म नहीं। गुरुओं का महागुरु पिताओं का पिता परमपिता परमेश्वर ही है। गुरु को भी बुद्धि ज्ञान देने वाला, परमेश्वर ही है। जब गुरु जनता को सत्य ज्ञान का उपदेश देने के स्थान पर असत्य, अज्ञान, पाखण्ड, अंधविश्वास, अंधभक्ति का उपदेश दे तो फिर समाज को सही राह कहाँ से मिलेगी? वह समाज भटकता ही रहेगा। आजकल के गुरु, शिष्य को ईश्वर का भक्त नहीं बनाते बल्कि अपना भक्त बनाते हैं। उसे उद्धार करने हेतु गुरु की भक्ति करने और गुरु की शरण में जाने को कहते हैं। सही गुरुमन्त्र गायत्री मन्त्र है जिसमें परमात्मा से सद्बुद्धि की याचना की गई है और सद्बुद्धि ही मास्टर चाबी है। गुरु दीक्षा में दिया गुरुमंत्र गोपनीय नहीं होता। गुरु द्वारा गुरुदीक्षा में चेले से कोई फल या सब्जी विशेष छुड़वाना महत्वपूर्ण नहीं है। गुरु को चेले से दोषों, बुराइयों, व्यसनों को छोड़ने का व्रत अर्थात् प्रतिज्ञा करवानी चाहिए। गुरु की केवल वेद और तर्कसम्मत बात ही माननी चाहिए। भोली भाली जनता को ईश्वर और धर्म के नाम पर गुमराह (भ्रमित) करना और खुद को पुजवाना उचित नहीं। गुरु को ईश्वर और सत्य से कहीं ऊँचा मान लेना यही गुरुडम है। आर्य समाज गुरुडम का विरोधी है, गुरु परम्परा, गुरु सम्मान का नहीं। समाज में गुरु और ब्राह्मण (विद्वान्) की भूमिका एक अच्छे और सच्चे मार्गदर्शक की होती है। सच्चा गुरु हमारे ज्ञान चक्षु खोल कर हमें विवेकशील ज्ञानवान बना देता है। गुरु वह है जो जगा दे, दिशा बता दे, मार्ग दिखा दे, आत्मपरिचय करा दे, जीवन जीना सिखा दे और परमपिता परमात्मा से मिला दे। महर्षि दयानन्द ने ज्ञान एक सच्चे गुरु, गुरु विरजानन्द से ही प्राप्त किया था। महात्मा बुद्ध, महावीर स्वामी, गुरु नानक देव, संत कबीर आदि ने ज्ञान स्वानुभूति अंतःप्रेरणा से प्राप्त की। उन्हें सच्चा गुरु नहीं मिल पाया। यदि इनको सद्गुरु से संस्कृत, व्याकरण, अष्टाध्यायी, महाभाष्य, वेद शास्त्रों का ज्ञान और मिल जाता तो भारत का बहुत बड़ा कल्याण हो गया होता।

सही कहा है-

गुरु कीजिए जान, पानी पी जे छान।
गुरु लालची चेला लोभी, दोनों खेलें दाव।
बीच भंवर में डूबते बैठ, पत्थर की नाव।।
जाका गुरु है आंधरा, चेला खरा निरंध।
अंधे अंधा ठेलिया, दोनों कूप पडंत।।

आर्यसमाज ईश्वर, धर्म, देवी देवताओं के नाम पर अंधविश्वास, अंधश्रद्धा को उचित नहीं मानता। जब श्रद्धा को बुद्धि विवेक से दूर रखा जाता है तो अंधश्रद्धा बन जाती है। आर्य समाज कहता है कि विवेकशील बनकर पहले जानो

फिर मानो। परम्परागत निरर्थक मान्यताओं, रुढ़ियों, अंधविश्वासों, मिथ्याज्ञान, अविद्या के प्रति पूर्वाग्रह को छोड़े बिना सत्य ज्ञान का प्रकाश नहीं हो सकता। आर्यसमाज में सत्य सर्वोपरि है। जो गुरु अपने शिष्य को धर्म, मुक्ति और ईश्वर प्राप्ति हेतु शॉर्टकट रास्ता बताता है वह सद्गुरु हो ही नहीं सकता क्योंकि वह स्वयं अन्धकार में है। हमारा कल्याण मात्र गुरु बनाने से, उनसे गुरुदीक्षा, कण्ठी, नामदान लेने मात्र से नहीं होगा, बल्कि सच्चे गुरु द्वारा बताए सत्यमार्ग पर चलने से होगा। कोई भी गुरु पूजा-पाठ, जप, अनुष्ठान कर अपनी दक्षिणा लेकर हमें पाप कर्मों के फल दुःख संकट होने से नहीं बचा सकता और न ही पापों से मुक्ति दिला सकता है। वह तो हमें अवश्य ही भोगने होंगे। ईश्वर के यहाँ ठेकेदारी या दलाली नहीं चलती, ईश्वर के न्यायालय में वकीलों का कोई काम नहीं है। वर्तमान हिन्दू धर्म का प्राचीन विशुद्ध (सत्य) स्वरूप वैदिक धर्म ही है जिसकी सार्वभौम सत्य मान्यताओं को स्वार्थी, प्रमादी, वाममार्गी पोपजनों द्वारा मध्यकाल में गुरुडम, पाखण्ड, अंधविश्वास, अवतारवाद, छुआछूत, आडम्बर फैलाकर एवं धर्मग्रन्थों में मिलावट कर विकृत कर दिया गया था। उन्होंने दुर्गा भैरव को प्रसन्न करने के नाम पर शराब मांस का सेवन, शंकर के नाम पर भांग गांजा सेवन, श्रीकृष्ण के नाम पर दुराचार व्यभिचार करने, यज्ञों में पशु हिंसा की छूट, धर्म के नाम पर मनमाने ग्रन्थ श्लोक बनाकर प्राप्त कर ली। आर्य समाज द्वारा हमारी सही मान्यताएँ जो उल्टी अर्थात् विकृत हो गई थीं उन्हें पुनः सीधा कर सही रूप बताया गया है। जिस प्रकार किसान अच्छी फसल पैदा करने को खेत से खरपतवार झाड़ी साफ करता है, दर्जी सुन्दर वस्त्र बनाने के लिए कपड़ा कैंची से काटता है, मूर्तिकार पत्थर पर छेनी हथौड़ा चलाकर सुन्दर मूर्ति बनाता है, कारीगर ईंट तोड़कर सुन्दर भवन बनाता है डाक्टर अर्थात् सर्जन विषैले फोड़े को ठीक करने के लिए ऑपरेशन करता है, वैद्य रोगी को ठीक करने के लिए कड़वी दवा देता है, उसी लोकहित, मानव कल्याण, राष्ट्र कल्याण की भावना से आर्य समाज सत्य का मण्डन (प्रचार) करने के लिए ही असत्य का खण्डन करता है। आर्य समाज नीर क्षीर विवेक की बात कहता है। आर्य समाज का उद्देश्य (मन्तव्य) किसी की भावना को ठेस पहुँचाना, दिल दुःखाना नहीं है। सत्य-धर्म-न्याय-राम राज्य की स्थापना के लिए असत्य, अधर्म, अन्याय, रावणराज्य का खण्डन आवश्यक होता है। अतः पूर्वाग्रह से हटकर खुले दिमाग से विचार कर सत्य का निर्णय कर जीवन पथ का फैसला करें और जीवन सार्थक करें। कहीं भटकने में ही जीवन निरर्थक चला जावे और अन्त में पछताना न पड़े कि-

- **मैंने जनम वृथा ही खोयो।**
- **जीवन खत्म हुआ तो जीने का ढंग आया।**
- **मन पछितैहें अवसर बीते।**
- **होश में आता है बशर उम्र ढल जाने के बाद।**
- **अब पछताए होत क्या जब चिड़िया चुग गई खेत।**

आर्य समाज के बारे में झूठा प्रचार किया जाता है कि वह भगवान को नहीं मानता, रामकृष्ण, हनुमान, शिव, गंगा, गायत्री को नहीं मानता। आर्य समाजी नास्तिक होता है। यह बात असत्य है। यह उन सभी को उनके वास्तविक सत्य स्वरूप में मानता है। वह इनके नाम पर फैले असत्य पाखंड को नहीं मानता। वह जो वस्तु जैसी है उसे वैसी ही मानता है। आर्य समाजी सच्चा ईश्वर भक्त होता है।

प्रख्यात हिंदू नेता पंडित मदन मोहन मालवीय के शब्दों में-

'आर्य समाज हिन्दुओं का रक्षक एवं प्रेरक है'।

सरदार बल्लभ भाई पटेल ने कहा है-

'यदि स्वामी दयानन्द ना होते तो हिन्दू समाज की क्या हालत होती इसकी कल्पना करना कठिन है'।

प्रसिद्ध कवि सूर्यकान्त त्रिपाठी निराला ने कहा था-

'हमारा सबसे अधिक उपकार महर्षि दयानन्द ने किया है'।

लेखक- अशोक कुमार गुप्त

साभार- जीवन का सीधा सरल और सही मार्ग

कर्मयोगी, समाजसेवी, अपने सुमधुर वचनों से सब के हृदय में स्थान बना लेने वाले आर्यश्रेष्ठि इस न्यास के न्यासी

श्री बलराम जी चौहान

को उनके शुभ जन्मदिवस के पावन अवसर पर हार्दिक शुभकामनाएँ।

हमारा वर्तमान जन्म हमारे पूर्वजन्म का पुनर्जन्म है

मनमोहन कुमार आर्य

वेद और वैदिक परम्परा में जीवात्मा को सनातन, अजन्मा, अमर, अविनाशी, जन्म व मरण के बन्धन में बन्धा हुआ और कर्मों का कर्त्ता और उसके फलों को भोगने वाला माना गया है। वेद क्या हैं? वेद ईश्वरीय ज्ञान है जो ईश्वर ने सृष्टि को बनाकर मनुष्यादि प्राणियों की अमैथुनी सृष्टि कर सर्ग वा सृष्टि के आरम्भ में अग्नि, वायु, आदित्य एवं अंगिरा नाम वाले चार ऋषियों को दिया था। अनेक तर्क व प्रमाणों से वेद ईश्वरीय ज्ञान सिद्ध होता है। इसका एक प्रमाण तो यह है कि जब संसार में कोई गुरु, शिक्षक, माता-पिता, विद्वान्, भाषा आदि नहीं थी तब आदि मनुष्यों को परमात्मा ने वेदों का ज्ञान दिया था। यदि परमात्मा वेदों का ज्ञान न देता तो अद्यावधि सभी मनुष्य जाति भाषा का ज्ञान न होने व भाषा का निर्माण न कर सकने की सामर्थ्य वा शक्ति के कारण मूक व बधिर होते। ऐसा होने पर सृष्टि

का, इसकी उत्पत्ति के बाद अधिक समय तक चलना भी सम्भव नहीं था। ईश्वर चेतन और सर्वव्यापक होने से सर्वज्ञानमय अर्थात् सर्वज्ञ है। जिस तरह से पिता अपने पुत्रों को ज्ञान देता व दिलाता है, उसी प्रकार ईश्वर भी अपनी प्रजा अर्थात् मनुष्य आदि प्राणियों को ज्ञान देता है। वेदों की सभी बातें तर्क व प्रमाणों से सिद्ध हैं। वेदों ने ईश्वर का जो स्वरूप बताया है वह सत्य है और उसे प्रायः सभी मतों के लोग मानते हैं। हाँ, अपने-अपने मत की अल्प, न्यून व वेद विपरीत शिक्षाओं के कारण वह इसे अपनी अज्ञानता आदि के कारण खुल कर स्वीकार नहीं कर पाते। वेद ईश्वर को सच्चिदानन्दस्वरूप, निराकार, सर्वशक्तिमान, न्यायकारी, दयालु, अजन्मा, अनन्त, निर्विकार, सृष्टिकर्त्ता, जीवात्माओं को जन्म व मृत्यु देने वाला होने सहित उनका पालनकर्त्ता बताते हैं।

मनुष्य का जीवन मात्र शरीर के अस्तित्व तक सीमित नहीं है। मनुष्य व प्राणियों के शरीर तो जड़ भौतिक पदार्थों अर्थात् पंचभूतों से मिलकर बने हैं। इन शरीरों में जो ज्ञान व कर्म करने की शक्ति है वह इसमें अनादि काल से अस्तित्व रखने वाली जीवात्माओं के कारण है। यह आत्मा ही मनुष्य व अन्य प्राणियों के जन्म से पूर्व पिता व माता के शरीरों में परमात्मा की प्रेरणा द्वारा प्रविष्ट होती है। उसके बाद जब माता के गर्भ में आत्मा का शरीर पूर्ण रूप से बन जाता है, तब गर्भ काल के दस मास बाद मनुष्य का शिशुरूप में जन्म होता है। जीवित शरीर में आत्मा होने का प्रमाण यह है कि मृत्यु होने पर मनुष्य व अन्य सभी प्राणियों का शरीर जड़वत् व निष्क्रिय हो जाता है। इसका एकमात्र कारण शरीर से चेतन जीवात्मा का अपने सूक्ष्म शरीर सहित निकल जाना होता है। जब तक शरीर में आत्मा होता है तब तक मनुष्य का शरीर सक्रिय रहता है और आत्मा उसमें रहकर सुख व दुःख भोगता रहता है। अनेक मनुष्यों को अपनी मृत्यु का पूर्वाभास भी हो जाता है। वह पहले ही अपने परिवारजनों को बता देते हैं कि अब उनके जाने का समय आ गया है और उन्हें जाना होगा। अनेक महात्माओं को अपने अन्तिम समय पर स्वेच्छा से आत्मा को शरीर से निकालते अर्थात् मृत्यु का वरण करते भी देखा गया है। ऋषि दयानन्द ने विषपान के कारण जर्जरित शरीर से अपनी आत्मा को ईश्वर का गुणगान करते हुए मास, पक्ष, दिन व तिथि आदि पूछ कर, क्षौर कर्म करा, शरीर को जल से शुद्ध कर व नये शुद्ध वस्त्र धारण कर

ईश्वर की प्रार्थना करते हुए लम्बी श्वांस भर कर अपनी आत्मा को शरीर से बाहर निकाल दिया था। यदि शरीर में

आत्मा न होती तो ऋषि दयानन्द और कुछ अन्य विद्वानों को इससे मिलती जुलती प्रक्रिया करने की आवश्यकता नहीं थी। आत्मा का अस्तित्व होना सत्य है। वह जन्म से पूर्व माता के गर्भ में आती है और मृत्यु के समय शरीर को छोड़कर ईश्वर की प्रेरणा व व्यवस्था से निकल जाती है। ईश्वर के कर्म-फल सिद्धान्त एवं जन्म विषयक नियमों के अनुसार कुछ समय बाद उस मृतक आत्मा का पुनर्जन्म हो जाता है। अतः जन्म-मरण सिद्ध होने के साथ मृत्यु के बाद आत्मा का अस्तित्व बने रहना भी सिद्ध होता है।

पुनर्जन्म के विषय में एक प्रश्न किया जाता है कि यदि यह हमारा पुनर्जन्म है तो हमें अपने पूर्वजन्म की स्मृतियाँ क्यों नहीं होतीं? इसका उत्तर यह है कि मृत्यु होने पर हमारा पूरा शरीर जिसमें हमारा मन, मस्तिष्क, बुद्धि, अन्तःकरण सहित सभी ज्ञानेन्द्रियाँ और कर्मेन्द्रियाँ होती हैं, आत्मा से पृथक् हो जाते हैं और उनसे युक्त शरीर को अग्नि को अर्पित कर नष्ट कर दिया जाता है। पूर्व शरीर के न रहने और उसकी आत्मा को नया जन्म लेने से लगभग १० महीनों तक तो माँ के गर्भ में रहना ही पड़ता है। इन १० महीनों व शैशवकाल में मनुष्य को पूर्वजन्म की बातों की विस्मृति हो जाती है। हम जानते हैं कि हम जो शब्द व वाक्य बोलते हैं, उनमें से पाँच दस वाक्य बोलने के बाद यदि उन्हें दोहराना हो तो हम उन्हें उसी शृंखला व क्रमबद्धता में दोहरा नहीं सकते। हमने कल रात में क्या खाया, परसों दिन में व रात को क्या खाया था, हम प्रायः भूल जाते हैं। तीन चार दिन पहले जो खाया-पीया होता है, वह किसी को स्मरण नहीं रहता। हमने कल, परसों व उससे पूर्व के दिनों में किस रंग के अपने कौन से वस्त्र पहने थे, दो-चार दिनों में कब-कब किस-किस से मिले थे, यह भी याद नहीं रहता। यदि हमें दो चार दिन की बातें ही याद नहीं रहतीं, उन्हें हम भूल जाते हैं, तो फिर पूर्वजन्म, जिसमें हमारा शरीर हमसे पृथक् हो गया तथा १० महीनों व उससे कुछ अधिक का समय हमारे पुनर्जन्म में व्यतीत हो गया, ऐसे में पूर्वजन्म की स्मृतियों का स्मरण रहना सम्भव नहीं होता। ऐसा होने में आश्चर्य की कोई बात नहीं है।

मनुष्य का मन एक समय में एक ही व्यवहार करता है। उसे हर समय अहसास व विश्वास रहता है कि उसका अस्तित्व है। अतः इस कारण भी वह पूर्वजन्म की स्मृतियों को स्मरण नहीं कर पाता। एक कारण यह भी होता है कि जन्म लेने से सन्तान के किशोर अवस्था में आने तक माता-पिता व अन्य परिवार जनों द्वारा बोली व कही जाने वाली अनेक बातों के संस्कार आत्मा व मन पर अंकित हो जाते हैं। इसलिये भी पुरानी स्मृतियाँ धूमिल पड़ जाती हैं। इस कारण भी पूर्वजन्म की स्मृतियाँ स्मरण नहीं रह पातीं।

परमात्मा ने मनुष्य की आत्मा के अल्पज्ञ होने के कारण भूलने का नियम बनाकर मनुष्यों का लाभ ही किया है। इस उदाहरण पर विचार करें कि पूर्वजन्म में मैं राजा था तथा इस जन्म में अपने पूर्वजन्म के कर्मों के कारण मेरा एक निर्धन व अभावग्रस्त परिवार में जन्म हो गया। यदि मुझे पूर्वजन्म का पूरा वृतान्त स्मरण रहेगा तो मेरा यह जीवन पिछले जन्म की स्मृतियों को याद कर व इस जन्म की प्रतिकूल परिस्थितियों पर विचार कर दुःख मनाने में ही व्यतीत हो जायेगा। अतः हमें ईश्वर का धन्यवाद करना चाहिये कि हमें पूर्व जन्म की स्मृतियाँ स्मरण नहीं हैं। हम एक प्रकार से जन्म के बाद से ही पूर्व स्मृतियों को विस्मृत कर नया जीवन व्यतीत करते हैं और इस जन्म का भरपूर आनन्द ले सकते हैं। यह ईश्वर की हम पर बहुत बड़ी कृपा है।

एक उदाहरण यह भी ले सकते हैं कि हमारे परिवार में किसी अत्यन्त प्रिय की मृत्यु हो जाये तो उससे हम दुःखी रहेंगे। यदि हमें यह दुःख हर समय स्मरण रहेगा तो हम जीवन को धैर्य व शान्ति से चला नहीं पायेंगे। कोई भी घटना, प्रिय व अप्रिय घटती है तो उसके बाद से ही हम उसे भूलना आरम्भ हो जाते हैं और हमारा दुःख भी समय के साथ कम होता जाता है। अपने प्रिय की मृत्यु के समय परिवारजनों को जो दुःख होता है उतना दुःख कुछ घण्टे बाद नहीं रहता। दो चार दिनों में तो मनुष्य सामान्य हो जाता है। ईश्वर ने पुरानी घटनाओं को भूल जाने का जो स्वभाव हमें दिया है, वह हमारे लिये हितकर है। इस कारण भी हमें पूर्वजन्म की मृत्यु एवं घटनाओं के प्रसंग स्मरण नहीं रहते।

पुनर्जन्म का प्रमाण इस बात में भी है कि संसार में कोई नया पदार्थ बनता नहीं है। इसका तात्पर्य है कि अभाव से भाव अर्थात् शून्य से किसी नये पदार्थ की उत्पत्ति नहीं होती। कोई मौलिक पदार्थ होगा, उसी से परमात्मा या मनुष्य रचना कर

सकते हैं। हम मकान बनाते हैं तो हमें इसमें मिट्टी, ईंट, बजरी, पत्थर, चूना, सीमेंट तथा सरियों आदि की आवश्यकता होती है। यह पदार्थ व इनकी कारण सामग्री परमात्मा ने पहले से ही सृष्टि में सुलभ करा रखी है। इसी प्रकार मनुष्य का शरीर जड़ प्रकृति के पदार्थों से परमात्मा माता के गर्भ में बनाता है जिसका जन्म लेने के बाद भोजन आदि करके विकास व विस्तार होता है। जीवात्मा अनादि, अनुत्पन्न व नित्य है। यदि परमात्मा इसको बार-बार जन्म न दे तो इसे सुख नहीं मिल सकता। ईश्वर सामर्थ्यवान् है, अतः उस पर दोष आयेगा यदि वह आत्मा को जन्म देने की सामर्थ्य होने पर भी जन्म न दे। ईश्वर हमसे अधिक ज्ञानी और बुद्धिमान है। वह हमें इस प्रकार की आलोचनाओं का अवसर ही नहीं देता। अतः वह आत्मा को मृत्यु के बाद शीघ्र जन्म देता है। किसी कारणवश जब शरीर आत्मा के रहने के योग्य नहीं रहता तो मृत्यु होती है और मनुष्यों व अन्य प्राणियों का जो कर्माशय होता है उसके अनुसार उसका पुनर्जन्म व नया जन्म होता है। जन्म-मरण का यह चक्र अनादि काल से चला आ रहा है और अनन्त काल तक चलता रहेगा। यह जन्म व मरण का चक्र कभी समाप्त होने वाला नहीं है। हाँ, अत्यधिक शुभ कर्मों जिसमें ईश्वर व आत्मा को जानना, ईश्वर की उपासना करना, सबसे प्रेमपूर्वक सत्य का व्यवहार करना आदि कर्मों को करके व ईश्वर का साक्षात्कार करके मनुष्य की आत्मा को मोक्ष मिल जाता है। मोक्ष की अवधि ३० नील १० खरब और ४० अरब वर्ष पूर्ण होने पर पुनः जन्म-मरण का चक्र आरम्भ हो जाता है। हम भी अनादि काल से जन्म व मरण के बन्धन में बन्धे हुए हैं और मोक्ष मिलने तक और उसके बाद भी मोक्ष की अवधि पूरी होने पर हमारा जन्म व मरण का चक्र पुनः आरम्भ हो जायेगा।

हमारा यह जन्म हमारे पूर्वजन्म का पुनर्जन्म है और हमारा आने वाला व उसके बाद के सभी जन्म पुनर्जन्म होंगे। हमारे जीवन का उद्देश्य ईश्वर व जीवात्मा के सत्यस्वरूप, गुण, कर्म और स्वभाव को जानकर तथा आत्मा से ईश्वरोपासना आदि कर्मों को करके ईश्वर का साक्षात्कार करना है और आनन्दस्वरूप परमात्मा को प्राप्त होकर आनन्द में विचरना है। हम पाठक मित्रों से निवेदन करेंगे कि वह जीवन व मरण तथा मोक्ष से जुड़े प्रश्नों को समझने के लिये ऋषि दयानन्द के सत्यार्थप्रकाश ग्रन्थ सहित उपनिषद्, दर्शन एवं वेदों का अध्ययन करें। इससे उन्हें संसार के सभी जटिल प्रश्नों का सच्चा समाधान प्राप्त होगा।

- 196, चुक्खूवाला-2
देहरादून-248001, चलभाष- 09412985121

पूरा नाम-
चलभाष-

सत्यार्थप्रकाश पहेली- ०९/२२

सत्यार्थ सौरभ सदस्य संख्या-

रिक्त स्थान भरिये- सत्यार्थप्रकाश जैसे महान् ग्रन्थ का स्वाध्याय कीजिए। (द्वादश समुल्लास पर आधारित)- पुरस्कार प्राप्त करिये

१	हीं १	■	२	प २	२	ध २	■	३	व ३
४ र	४	४	र ४	■	५ दु	५	५	क ५	■
६	६	व ६	■	७	७ तु	७	■	८	च ८

संकेत (बाएँ से दाएँ) ऊपर से नीचे न भरें।

१. सौत्रान्तिक किसी पदार्थ को प्रत्यक्ष मानता है या नहीं?
२. जो इन्द्रियों से रूपादि विषय ग्रहण किया जाता है वह क्या कहाता है?
३. वैशेषिक के अनुसार कितने द्रव्य माने गये हैं?
४. 'इस तिरछे लोक में असंख्यात द्वीप और असंख्यात समुद्र हैं' यह वाक्य किस ग्रन्थ में लिखा है?
५. तत्त्वविवेक के अनुसार श्रेणिक के घोड़े की टाप से मर कर शुभध्यान के योग से कौन महर्द्धिक देवता हुआ?
६. जीव का अजीव में और अजीव का जीव में क्या रहता है?
७. महर्षि दयानन्द ने वर्णों की व्याख्या किस समुल्लास में लिखी है?
८. जैनियों के मुष्टि लुंचन आदि कितने हैं?

''विस्तृत नियम पृष्ठ २६ पर पढ़ें एवं ₹५१०० पुरस्कार प्राप्त करें।''

कार्यालय में हल की हुई पहेली प्राप्त करने की अन्तिम तिथि- १५ दिसम्बर २०२२

राष्ट्र रक्षा के वैदिक साधन

भारत स्वतंत्र हो गया है। जैसे स्वतंत्रता प्राप्त हुई है उसके लिए बहुत बड़ा शुल्क देना पड़ा है। असंख्यातजन सूली पर चढ़े हैं जेलों में सड़े हैं, कई ग्रामों का चिह्न तक मिटा दिया गया है। स्वतंत्रता की देवी सचमुच बहुत बड़ी बलि लिया करती है। स्वतंत्रता मिली, किन्तु भारत अखण्ड न रहा। भारत का बहुत बड़ा भूभाग भारत के अंग से काट दिया गया। लाखों निरीह निर्दोष मनुष्य बालक, युवा, वृद्ध, स्त्री-पुरुष किसी अपराध के बिना ही मौत के घाट उतार दिए गए। यह क्यों हुआ? आज इसकी विवेचना करना उपयुक्त नहीं है। भावी तटस्थ ऐतिहासिक कदाचित् इसका विश्लेषण कर सकें। किन्तु इस बात को कहने में कुछ दोष नहीं कि लगभग एक सहस्र वर्ष से हम एक भयंकर भूल करते आ रहे थे उसका यह परिणाम हुआ है।

यदि वर्तमान काल में भारत से पृथक् किया गया भूभाग वापस न लिया जा सका तो आगे आने वाली सन्तान भारत के इस स्वरूप को भूल जायेगी और इस खंडित देश को ही सम्पूर्ण भारत मान लेगी। उसे यह कभी सूझेगा ही नहीं कि भारत इससे कहीं बहुत बड़ा था। जैसे आज के साधारण भारतीय को यह ज्ञात नहीं कि आज से सहस्रों वर्ष पूर्व भारत बहुत अधिक विस्तृत था। रामायण और महाभारत के अवलोकन से ज्ञात होता है कि वर्तमान ईरान तथा अफगानिस्तान भारत के भाग थे। अरब वालों से भारतीयों के विवाहादि सम्बन्ध होते थे। मिश्र एवं अरब के सम्राट वाणासुर (बलिपाल असुर) की कन्या उषा का विवाह सम्बन्ध महाभारत युद्ध के विख्यात वीर अर्जुन के सारथी भगवान कृष्ण के पौत्र अनिरुद्ध के साथ हुआ था।

पौराणिक काल में हमारे भारत की पश्मिोत्तरी सीमा कश्यप सागर अर्थात् कैस्पियन सी के पश्चिमी तटवर्ती बाकूनगर तक अवश्य थी। ज्वालामुखी का पुरातन मंदिर वहाँ है उसमें संस्कृत शिलालेख विद्यमान हैं। सन् १६१४ ईस्वी. तक वहाँ भारतीय पुजारी ही रहता था। वह मुल्तान जिले का निवासी था। वह ज्वालामुखी बड़ी माई कहलाती थी और कांगड़ा वाली छोटी माई कहलाती थी। आज यह बात प्रायः सबको विस्मृत हो चुकी है। हमारे प्रमाद के कारण हम समय-समय पर धकेले जाते रहे। आज हमें एक और धक्का लगा है और हम कहाँ आ पहुँचे हैं। बलूचिस्तान में हिंगलाज देवी, पेशावर की पंचतीर्थी, बन्नू जिले के भरत तथा कैकेयी ग्राम, मुल्तान की नरसिंगपुरी, शाहपुरा जिले का नरसिंहपुहार, जेहलम जिले का कटाक्ष राजतीर्थ, रावलपिण्डी जिले के चौहाभक्तां, थोहाखालसा तीर्थ आदि आदि पुण्य स्थान विस्मृति के गर्त में निगीर्ण हो जायेंगे। यह भूलना शुभ नहीं है।

भारत की पराधीनता पर इस काल के ज्ञात इतिहास में जिस व्यक्ति ने सर्वप्रथम शोकाश्रु बहाये हैं, हृदय की वेदना का परिचय दिया है। वह एक संसार त्यागी वीतराग योगी था। विक्रम की १९वीं शती में उस जैसा सुधारक भारत के अन्यत्र भी नहीं दिखता। अंग्रेजों के प्रचण्ड आतंक से जब आतंकित होकर भारतीय मूक हो रहे थे। उस विकट समय में उस महामनुष्य ने स्वदेशी राज्य को सर्वोत्तम घोषित किया। उसके पुनीत शब्द इस प्रकार हैं-

'अब अभाग्योदय से और आर्यों के आलस्य, प्रमाद, परस्पर के विरोध से अन्य देशों के राज्य करने की कथा का क्या कहना। किन्तु आर्यावर्त्त में भी आर्यों का अखण्ड, स्वतंत्रत, स्वाधीन निर्भय राज्य इस समय नहीं है। जो कुछ है सो विदेशियों से पादाक्रान्त हो रहा है। कुछ थोड़े राजा स्वतंत्र हैं। दुर्दिन जब आता है तब देशवासियों को अनेक प्रकार का दुःख भोगना पड़ता है। कोई कितना ही करे परन्तु जो स्वदेशी राज्य होता है वह सर्वोपरि उत्तम होता है अथवा मत-मतान्तर के आग्रह रहित, अपने और पराये का पक्षपात शून्य, प्रजा पर पिता माता के समान कृपा, न्याय और दया के साथ विदेशियों का राज्य भी पूर्ण शुभदायक नहीं होता। परन्तु भिन्न-भिन्न भाषा पृथक्-पृथक् शिक्षा, अलग व्यवहार का छूटना दुष्कर है। बिना इसके छूटे परस्पर का पूरा उपकार और अभिप्रायः सिद्ध होना कठिन है। (सत्यार्थ प्रकाश अष्टम समुल्लास)

पराधीनता पर कितना खेद प्रकट किया है। विदेशी राज्य की अनुपयोगिता किस मार्मिक रीति से घोषित की है। स्वराज्य का महत्व कितने भव्य शब्दों में आविष्कृत किया है। यह स्मरण रखना चाहिए कि कांग्रेस का तब जन्म ही नहीं हुआ था।

जिस महामनुष्य ने भारतीयों को इस युग में स्वराज्य का नाद सुनाया उसी महात्मा ने अपने दीर्घ तप, विशाल अनुभव और विस्तृत अध्ययन के आधार पर भारतीय जनता को विशेष और अन्यों को सामान्य रूप से बताया कि वेदों की ओर चलो। आज का विकासवादी भी मानव के हितकर कोई ऐसा सिद्धान्त प्रस्तुत न कर सका जिसका वेद में उल्लेख न हो। भारतीय परम्परा के अनुसार वेद सब सत्य विद्याओं का पुस्तक माना जाता है। अतः उस महर्षि ने वेदाभ्यास पर बहुत अधिक बल दिया।

यहाँ उस महामनुष्य के महनीय महोपकारों के परिगणन की आवश्यकता नहीं है किन्तु उसके एक अतीव उपयोगी महोपकार की चर्चा करने के लोभ को हम संवरण नहीं कर सकते। महाराज के कार्य क्षेत्र में अवतीर्ण होने से पूर्व एक भारतीय महापुरुष की प्रेरणा पर अंग्रेज शासकों ने एक ऐसी योजना का आयोजन कर उसे कार्य में परिणत करना आरम्भ कर दिया था जिससे भारतीय अपने अतीत गौरवपूर्ण इतिहास को भूल जायें। दयानन्द प्रथम महामनुष्य हैं जिसने भारतीयों में जातीय गौरव को जगाया। इनके अन्दर पाश्चात्य शिक्षा-दीक्षा के कारण उत्पन्न हुई हीन भावना को भगाया और अपने पूर्वजों अपनी सभ्यता तथा संस्कृति पर गर्व करना सिखाकर जातीय गौरव की अनुभूति सिखायी। दयानन्द यदि और कुछ न करते केवल यही कार्य कर जाते तो भी आने वाली सन्तान के कल्याण के लिए यह पर्याप्त था। किन्तु दयानन्द ने इससे अधिक वेद की ओर चलने का आदेश करके यह बताया कि तुम उच्छिष्ट सेवी मत बनो। अपने दृष्टिकोण से सभी वस्तुओं और घटनाओं को देखो, विचारो और अपने दृष्टिकोण तथा अपनी सभ्यता, संस्कृति की कसौटी के द्वारा उनका मूल्य आंको। यह इतनी बड़ी देन है कि जिसकी क्षमता और कुछ वस्तु नहीं कर सकती। दयानन्द जब तक जिए इस कसौटी पर सबको कसते रहे और इसी के अनुसार चलने का उपदेश करते रहे। वे प्रत्येक समस्या का समाधान वेद से प्राप्त करते थे।

आज जब देश स्वतंत्र हो गया है तब उस स्वतंत्रता की रक्षा की विकट समस्या उपस्थित है। स्वतंत्रता को प्राप्त करना इतना कठिन नहीं जितना कि उसकी रक्षा करना। वेद में स्वराज्य के सम्बन्ध में बहुत कुछ कहा गया है। अथर्ववेद के १२वें काण्ड का प्रथम सूक्त राष्ट्र सूक्त या स्वराज्य सूक्त है। वेद में अध्यात्म प्रकरण से उतरकर दूसरा स्थान राष्ट्र का है। ऋग्वेद के प्रथम मंडल का ८०वाँ सूक्त स्वराज्य सूक्त है। उसके प्रत्येक मंत्र के अन्त में आता है 'अर्चनननू स्वराज्यम्' इस प्रकार चारों वेदों में स्थान-स्थान पर राष्ट्र की बहुत चर्चा है।

स्वामी वेदानन्द तीर्थ

साभार- राष्ट्र रक्षा के वैदिक साधन

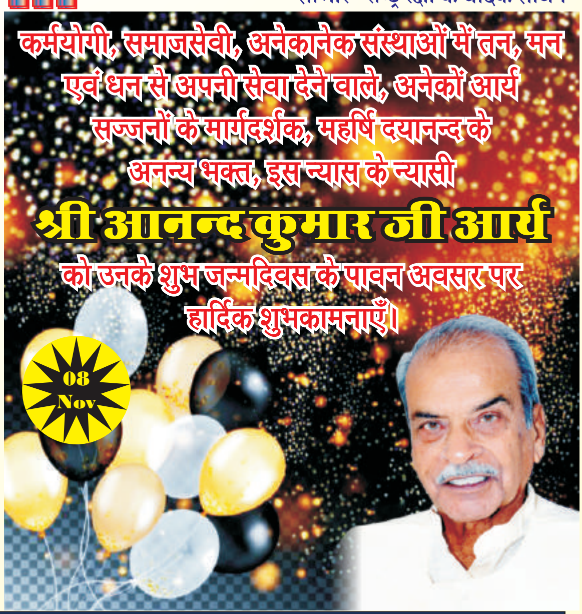

अपनी गलतियों की स्वीकृति व सुधार में निहित है महानता का सूत्र

गलतियाँ किससे नहीं होतीं? सबसे होती हैं। इसीलिए कहा गया है कि इंसान गलतियों का पुतला होता है लेकिन अपनी गलतियों से सीखकर ही वो आगे बढ़ता है। केवल वे लोग ही गलतियाँ नहीं करते या कर सकते जो कुछ भी नहीं करते क्योंकि न तो वे कुछ करेंगे और न गलतियाँ होने की संभावना होगी। लेकिन गलतियाँ न होने की स्थिति में क्या होगा? हम कुछ भी नहीं सीख पाएँगे। कुछ भी नहीं सीख पाएँगे तो आगे कैसे बढ़ेंगे? आगे बढ़ने के लिए सीखना अनिवार्य है और सीखने की प्रक्रिया में गलतियों का होना स्वाभाविक है लेकिन इसका ये तात्पर्य कदापि नहीं कि इंसान गलतियाँ ही करता रहे। किसी गलती को वह बार-बार दोहराता रहे। गलतियाँ होना स्वाभाविक है लेकिन उन्हें दोहराना अपराध से कम नहीं क्योंकि गलतियों को बार-बार करके ही हम उनके अभ्यस्त हो जाते हैं और पहले छोटी-छोटी गलतियाँ और बाद में बड़ी-बड़ी गलतियाँ करके अपराध तक करने लगते हैं।

व्यक्ति अपनी गलतियों से ही सीखता है और आगे बढ़ता है लेकिन इसके लिए जरूरी है कि व्यक्ति अपनी गलतियों को जाने, उन्हें स्वीकार करे और उन्हें दूर करे। प्रायः ऐसा होता है कि जब कोई हमारी किसी गलती की ओर संकेत करता है तो हम उसे स्वीकार करके उसे तत्क्षण सुधारने के बजाय उसे ठीक ठहराने की कोशिशों में लग जाते हैं। उसके लिए तर्क-वितर्क ही नहीं कुतर्क करने से भी परहेज नहीं करते। कई बार इस प्रकार का वाद-विवाद फसाद का रूप ले लेता है। यदि कोई हमारी गलती की ओर संकेत करता है तो कई बार हम अपनी गलती को स्वीकार करने के बजाय सामने वाले की गलतियाँ ही निकालने या गिनवाने लग जाते हैं। कई बार अपनी गलती को स्वीकार करने के बजाय हम उसे गलती ही नहीं मानते और प्रायः कह देते हैं कि ये तो आम बात है या ऐसा तो सभी करते हैं फिर मैं कैसे गलत हुआ? इस प्रकार के तर्क देते-देते व ऐसा आचरण दोहराते-दोहराते कब पूरा समाज रसातल में पहुँच जाता है पता ही नहीं चलता।

प्रायः जब हमसे कोई गलती हो जाती है तो उसे स्वीकार करना हम अपनी प्रतिष्ठा के लिए घातक मानते हैं। सोचते हैं कि इससे हमारी प्रतिष्ठा पर आँच आएगी। हम दोषी मान लिए जाएँगे। इससे हमारी इमेज खराब हो जाएगी। हमारी इज्जत चली जाएगी। वास्तव में गलती स्वीकार करने पर हमारी प्रतिष्ठा पर कोई आँच नहीं आती अपितु ऐसी स्थिति में लोग हमें सत्यनिष्ठ व ईमानदार मानने लगते हैं। यदि ऐसा है तो हम फिर भी अपनी गलतियों को स्वीकार करने में क्यों हिचकिचाते हैं? वास्तव में गलतियों को स्वीकार करना भी साहस का कार्य है और हम अपेक्षित साहस नहीं जुटा पाते। जब हम बार-बार गलतियाँ करते हैं और उन्हें स्वीकार नहीं करते तो कई बार चाहते हुए भी हम अपनी किसी एक गलती को ये सोचकर स्वीकार नहीं कर पाते कि अब एक गलती को मान लेने से भी क्या हो जाएगा? अब नौ सौ चूहे खाकर बिल्ली के हज को जाने का क्या औचित्य होगा? वास्तव में इस दुष्चक्र को तोड़ना अनिवार्य है।

किसी भी सूरत में अपनी गलती स्वीकार न करना वास्तव में हमारी उस काल्पनिक छवि को बचाए रखने के प्रयास के कारण होता है जिसे हम किसी भी हालत में बदलते हुए देखना नहीं चाहते। प्रायः गलत बात पर अड़े रहने अथवा किसी भी सूरत में अपनी गलती न मानने को कुछ लोग एक

गुण अथवा दृढ़ता के रूप में लेते हैं। कुछ लोग दूसरों को गलत सिद्ध करने के लिए भी अपनी गलत बात पर अड़ जाते हैं। वास्तव में इस प्रकार का आचरण एक बहुत बड़ा अवगुण ही नहीं अपितु एक बहुत बड़ी कमजोरी भी है। हम भोजन बनाते समय कुछ मसालों का प्रयोग करते हैं जिससे भोजन स्वादिष्ट ही नहीं पौष्टिक व सुपाच्य भी बनता है। यदि हम किसी एक मसाले को भी उचित मात्रा में न डालें अथवा एक खराब मसाला डाल दें तो पूरा भोजन ही खराब हो जाएगा। इसी प्रकार से एक गुण की कमी अथवा एक अवगुण के कारण हमारा व्यक्तित्व व चरित्र भी बुरी तरह से प्रभावित होता है। चरित्रवान अथवा नैतिक होने के लिए मात्र कुछ अच्छे गुणों का होना ही अनिवार्य नहीं अपितु अपनी गलतियों व कमजोरियों को सबके समक्ष स्पष्ट रूप से स्वीकार करने का गुण होना भी अनिवार्य है।

अपनी गलती को स्वीकार करना वो गुण है जो वास्तविक उन्नति का मार्ग प्रशस्त करने में सक्षम होता है। इस संदर्भ में एक प्रसंग याद आ रहा है। सड़क संकरी थी फिर भी बस तेजी से दौड़ी जा रही थी क्योंकि ड्राइवर अत्यन्त कुशल था। अचानक बस की गति धीमी हो गई। सामने से गन्नों से लदी हुई ट्रॉलियाँ आ रही थीं अतः उनको रास्ता देने के लिए भी बस की गति कम करना अनिवार्य था। जब बस गन्नों से लदी हुई ट्रॉलियों के पास पहुँची तो वे सड़क से थोड़ा नीचे उतरकर सड़क के किनारे लगकर खड़ी हो गईं। यह एक पर्यटक बस थी जिसमें शिक्षा विभाग के उच्च अधिकारी और अध्यापक सवार थे जो भारत-भ्रमण पर निकले थे। गन्नों को देखकर कई लोगों के मुँह में पानी आ गया लेकिन किसी की हिम्मत नहीं हुई कि किसी ट्रॉली में से एक गन्ना भी खींच ले क्योंकि विभाग के सबसे बड़े अधिकारी भी बस में उपस्थित थे। चाहे कितने भी कामचोर अथवा भ्रष्ट कर्मचारी क्यों न हों लेकिन अपने विभाग के बड़े अधिकारियों की उपस्थिति में

तो वे अधिकाधिक अनुशासनप्रिय, कर्मठ और ईमानदार होने का प्रमाण ही प्रस्तुत करने का प्रयास करते हैं। कुछ ऐसी ही विवशता यहाँ भी दिखलाई पड़ रही थी।

बस की गति भी अत्यन्त धीमी हो गई थी और बस सड़क के किनारे खड़ी गन्नों से लदी एक ट्रॉली को पार कर रही थी। इतने में शिक्षा अधिकारी महोदय ने बाहर हाथ निकाला और झटपट एक गन्ना खींच लिया। बस फिर क्या था। सारी वर्जनाएँ टूट गईं। केवल बस की दाईं ओर बैठे यात्रियों ने ही नहीं अपितु विपरीत दिशा में बैठे यात्रियों ने भी दूसरी तरफ आ-आकर गन्ने खींचने शुरू कर दिए। बस में भगदड़ जैसी स्थिति हो गई। इतने में एक नवयुवक ने खड़े होकर कहा, 'अरे आप सब लोग ये क्या कर रहे हो? एक किसान जो इतनी मेहनत से फसल उगाता है उसे यूँ ही मुफ्त में झपट रहे हो।' इतना कहकर नवयुवक ने शिक्षा अधिकारी की ओर मुँह किया और कहा, 'सर आप भी!' सहयात्री नवयुवक को आग्नेय नेत्रों से घूरने लगे और एक व्यक्ति ने कहा, 'मिस्टर अपनी औकात में रहो। शिक्षा अधिकारी से इस तरह बात करने की जुर्अत कैसे की तुमने?'

अब शिक्षा अधिकारी की बारी थी। वे खड़े हो गये और बोले, 'ठीक ही तो कह रहा है ये नवुयवक। हमें क्या अधिकार है किसी की चीज यूँ उठाने का। और चोरी के बाद अब सीनाजोरी। नहीं, हम सबने गलत किया है।' इसके बाद उन्होंने कहा कि पहले मैंने गलती की और बाद में आप सबने उसे दोहराया। मुझे फख्र है कि पूरी बस में एक व्यक्ति तो है जिसमें ईमानदारी व नैतिकता के साथ-साथ निडरतापूर्वक अपनी बात कहने का साहस भी है जिसने अपने उच्च अधिकारी की भी खबर लेने की हिम्मत की। मैं अपनी गलती स्वीकार करता हूँ और अपने नवयुवक मित्र की ईमानदारी, नैतिकता और साहस की प्रशंसा करता हूँ। दुर्लभ होते हैं ऐसे नवयुवक और उससे भी अधिक दुर्लभ होते हैं ऐसे उच्च अधिकारी। पद से कोई व्यक्ति बड़ा नहीं होता अपितु बड़ा होता है पद की गरिमा बनाए रखने से और उदात्त जीवन मूल्यों को नष्ट होने से बचाए रखने से। अपनी गलती को स्वीकार करना एक उदात्त जीवन मूल्य है और उसे स्वीकार करने वाला एक बड़ा व्यक्ति।

एक और घटना याद आ रही है। एक बहुत अच्छे व्यक्तित्व विकास एवं मानव संसाधन विकास प्रशिक्षक हैं। सचमुच बहुत अच्छे प्रशिक्षक। एक बार एक कार्यक्रम में उन्हीं के द्वारा प्रशिक्षित व्यक्तियों की एक प्रतियोगिता चल रही थी। उस प्रतियोगिता के निर्णायकों में वे स्वयं भी थे। प्रतियोगिता

अंतिम दौर में थी। अन्त में बचे दो प्रतिभागियों में से एक को विजयी घोषित किया जाना था। अंतिम मुकाबले के बाद उन्होंने अपनी पसन्द के प्रतिभागी को सही बतलाकर उसे विजयी घोषित कर दिया। उनका इतना सम्मान था कि लोग उनकी गलत बात का भी विरोध नहीं कर पाते थे लेकिन उस दिन वहाँ उपस्थित अधिकांश लोगों ने उनके निर्णय को गलत बतलाते हुए उनका विरोध किया। इस पर उन्होंने 'बॉस इज ऑल्वेज राइट' कह कर सबको चुप रहने के लिए विवश कर

दिया। उसके बाद इस प्रकार का आचरण करना उनके लिए सामान्य बात हो गई।

उनके इस प्रकार के आचरण से उनकी प्रतिष्ठा पर अत्यन्त प्रतिकूल प्रभाव पड़ा। क्योंकि उनके सामने सही बोलने का महत्त्व कम होता चला गया अतः सही लोग उनसे दूर होते चले गए और केवल चापलूस किस्म के लोग उनके साथ रह गए। उनके कुछ सहयोगी प्रशिक्षक भी उनको छोड़कर चले गए जिससे उनके व्यावसायिक हित भी बुरी तरह से प्रभावित हुए। ऐसे अनेक व्यक्ति मिल जाएँगे जो अपनी हैसियत अथवा प्रतिष्ठा के दम्भ में अपनी गलती को स्वयं स्वीकार करना और उसे सुधारना तो दूर उनकी गलती को बतलाने पर भी वे उसे स्वीकार करने और सुधारने को तैयार नहीं होते। कई बार कुछ निहित स्वार्थों अथवा पक्षपातपूर्ण रवैये के कारण भी लोग गलती करते हैं अतः ऐसी दशा में उनके द्वारा की गई गलती की स्वीकृति और सुधार का प्रश्न ही नहीं उठता। लेकिन जान-बूझकर गलती करने अथवा अपनी गलती को स्वीकार करके उसे नहीं सुधारने का खमियाजा तो अवश्य ही भुगतना पड़ता है।

प्रायः देखने में आता है कि अधिकांश व्यक्ति अपने से कमजोर अथवा कम हैसियत वाले लोगों व अपने विरोधियों में गलतियाँ निकालते रहते हैं व अपने से अच्छी हैसियत वाले लोगों व अपने प्रियजनों अथवा समर्थकों की गलतियों को न केवल नजरअंदाज करते रहते हैं अपितु उनकी गलतियों को गलतियाँ न मानकर उन्हें महिमामंडित करने के प्रयासों में लगे रहते हैं। साथ ही एक सही व्यक्ति पक्षपात रहित होकर किसी की गलती को नजरअंदाज करने के बजाय उसे स्पष्ट रूप से कह देता है। वास्तव में गलती तो किसी से भी हो सकती है लेकिन केवल महान् व्यक्ति ही अपनी गलती का अहसास होने या कराए जाने पर उसे स्वीकार करने में देर नहीं लगाते। भूल अथवा गलतियाँ होना स्वाभाविक हैं। गलतियों को स्वीकार किए बिना उनका सुधार करना अथवा होना भी असम्भव है। हम अपनी गलतियों से ही सबसे ज्यादा सीखते हैं अतः जो व्यक्ति भी अपनी गलतियों को स्वीकार कर सुधार लेते हैं वे न केवल महान् बन पाते हैं अपितु सही अर्थों में वे ही महान् होते हैं।

- सीताराम गुप्ता

ए. डी. १०६-सी., पीतम पुरा, दिल्ली- ११००३४

चलभाष- ९५५५६२२३२३

संरक्षक मण्डल - सत्यार्थ सौरभ (₹११,०००)

श्री रतिराम शर्मा, श्री रामेश्वर दयालु गुप्त; गाजियाबाद, श्रीमान् आनन्द कुमार आर्य, श्री सुरेश चन्द्र आर्य, श्री दीनदयाल गुप्त, स्वामी (डॉ.) ओमानन्द सरस्वती, श्री बी.एल. अग्रवाल, श्री भवानी दास आर्य, श्री मिठाईलाल सिंह, श्री चन्दूलाल अग्रवाल, श्री कै. देवरत्न आर्य, श्री नारायण लाल मित्तल, श्रीमती आभा आर्या, श्रीमती शारदा गुप्ता, श्रीमती पुष्पा गुप्ता, स्वामी (डॉ.) आर्येशानन्द सरस्वती, श्री सुधाकर पीयूष, आर्यसमाज गाँधीधाम, आर्य परिवार संस्था कोटा, श्री राजकुमार गुप्ता एवं सरला गुप्ता, प्रो. आई. जे. भाटिया; नासिक, श्री श्रवण कुमार गुप्ता, श्रीमती ओमप्रकाश वर्मा; जयपुर, श्री कृष्ण चौपड़ा, श्री दीपचन्द आर्य; बिजनौर, श्री खुशहालचन्द आर्य, गुप्तदान उदयपुर, श्री राव हरिश्चन्द्र आर्य, श्री लक्ष्मण सराफ, श्री मोती लाल आर्य, श्री रघुनाथ मित्तल, श्री जयदेव आर्य, स्वामी प्रवासानन्द सरस्वती, श्री नरेश कुमार राणा, स्वामी प्रणवानन्द सरस्वती, श्री वीरेन्द्र मित्तल, श्री विजय तायलिया, गुप्त दान दिल्ली, प्रो. आर.के.एरन, श्री एम. विजेन्द्र कुमार टॉक, श्री विकास गुप्ता, श्री भारतभूषण गुप्ता, डॉ.मोतीलाल शर्मा, डी.ए.वी. एकेडमी, टाण्डा, मिश्रीलाल आर्य कन्या इण्टर कॉलेज, टाण्डा, श्री एम.पी. सिंह, श्री रामप्रकाश छाबड़ा, श्री प्रधान जी, मध्यभारतीय आ. प्र. सभा, श्री विवेक बंसल, श्रीमती गायत्री पंवार, डॉ. अमृतलाल तापड़िया, श्री लोकेश चन्द्र टांक, आर्य समाज हिरणमगरी, उदयपुर, श्री प्रह्लादकृष्ण एवं श्रीमती प्रभा भार्गव, डॉ. वेद प्रकाश गुप्ता, श्री वीरसेन मुखी, श्री सुरेशपाल, यू.एस.ए., श्री राजेन्द्र कुमार सक्सेना, कोटा, श्रीमती सुमन सूद, कन्डा घाट (सोलन), माता शीला सेठी, न्यूजर्सी, डॉ. एस. के. माहेश्वरी, उदयपुर, श्री राजेश तिवारी (शिक्षक), ग्वालियर, डॉ. पूर्णसिंह डबास, नई दिल्ली, श्रीमती सविता सेठी, चण्डीगढ़, श्री बृज वधवा, अम्बाला शहर, श्री हजारी लाल आर्य, उदयपुर, डॉ. सत्यप्रकाश, हरदोई, श्री राजेन्द्रपाल वर्मा, वडोदरा, प्रिन्सीपल डी. ए. वी. एच. जेड. एल. सी. सै. स्कूल, दरीबा (राजसमन्द), आचार्य आनन्द पुरुषार्थी, होशंगाबाद, श्री ओ३म् प्रकाश अग्रवाल, नोएडा, श्री भरत ओ३म् प्रकाश अग्रवाल, अहमदाबाद, श्री सुरेन्द्र कर्मचन्दानी, पुणे, डॉ. आनन्द कुमार शर्मा, नई दिल्ली, श्री रमेश चन्द्र गुप्ता, यू.एस.ए., श्री शुद्धबोध शर्मा; श्रीगंगानगर, श्री कन्हैया लाल आर्य, शाहपुरा, डॉ. सत्या पी. वार्ष्णेय; कनाडा, श्री अशोक कुमार वार्ष्णेय; बडोदरा, श्री नागेन्द्र प्रसाद गुप्ता, बगहा (बिहार), श्री गणेशदत्त गोयल, बुलन्दशहर (उ. प्र.), श्री पूर्णचन्द आर्य, कानोड़, श्री वेदप्रकाश आर्य; नई दिल्ली, श्री सत्यनारायण शर्मा; उदयपुर, श्रीमती राधा देवी-रतन लाल राजोरा; निम्बाहेड़ा, श्री सत्यप्रकाश शर्मा; उदयपुर, सुदर्शन कपूर; पंचकूला, श्री देवराज सिंह; उदयपुर, श्रीमती ललिता मेहरा; उदयपुर, श्री कृष्ण लाल डंग आर्य; हिमाचल प्रदेश, श्री जी. राजेश्वर (गौड़) आर्य; हैदराबाद, पुरुषोत्तम लाल मेघवाल; उदयपुर, श्री बलराम जी चौहान; उदयपुर, श्री राकेश जैन; उदयपुर, श्रीमती कमलकान्ता सहगल; पंचकूला, श्री अम्बालाल सनाढ्य; उदयपुर, श्री भँवर लाल आर्य; उदयपुर, श्री वेलजी धनजी भाई; महाराष्ट्र, श्री सज्जनसिंह कोठारी; जयपुर, श्री चेतन प्रकाश आर्य; जोधपुर, ठाकुर जितेन्द्र पाल सिंह; अलीगढ़, श्री घनश्याम शर्मा; जयपुर, श्री मानसिंह चौहान; डूंगरपुर, श्री अजय कुमार गोयल; पानीपत

बलवन्त सिंह उर्फ भगत सिंह

कथा सरित

आज भी भारत के देशभक्त जोशीली भावनाओं को प्रकट करते हैं बसंती चोला पहनकर शहीद भगतसिंह से प्रेरणा ग्रहण करते हैं। आइए, आपको भगतसिंह ने कैसे 'मारा बम का गोला', इसकी सच्ची कहानी सुनाएँ। इस कहानी को साहित्यकारों ने भगवान राम की भाँति भिन्न-भिन्न रूपों में प्रस्तुत किया है। किन्तु हम यह कहानी एक साहित्यकार की 'आत्मकथा' के आधार पर प्रस्तुत कर रहे हैं, जिसे साथ लेकर भगतसिंह एसेम्बली में बम डालने गए थे।

वे महान् साहित्यकार हैं- स्वनाम धन्य स्वर्गीय आचार्य चतुरसेन शास्त्री। सरदार भगतसिंह बलवन्तसिंह नाम से 'अर्जुन' (दैनिक) के संपादकीय विभाग में अनुवाद का कार्य करते थे। बलवन्तसिंह ने अपना पता कभी किसी को बताया नहीं। 'चाँद' के फांसी अंक के प्रकाशन में सहयोग के समय आचार्य चतुरसेन जी से परिचय हुआ, तो इनके घर उनका आना-जाना होने लगा। उनको लगा कि इस देशभक्त दम्पति में वह माता-पिता के दर्शन कर सकता है। अतः वह शास्त्री जी को 'पिताजी' कहकर सम्बोधित करता था।

८ अप्रैल १९२९ को बलवन्तसिंह प्रातः १० बजे टैक्सी लेकर आचार्य चतुरसेन के यहाँ पहुँचा और एसेम्बली चलने का आग्रह करने लगा। मना करने पर बलवन्तसिंह ने उस दिन कार्रवाई का महत्व बताते हुए कहा स्पीकर पटेल इस्तीफा देंगे। स्वराज्य पार्टी वाक-आउट करेगी और भी न जाने क्या कुछ हो जाए। इस पर आचार्यजी एसेम्बली चलने को तैयार हो गए। आचार्य चतुरसेन शास्त्री उनके अनुज चन्द्रसेन, उनकी पत्नी और बलवन्तसिंह चारों टैक्सी में बैठकर १० बजकर १५ मिनट पर एसेम्बली हॉल में पहुँच गए।

'बलवन्तसिंह नई कमीज और निक्कर पहने हुए थे। सिर पर फ्लैट हैट सुशोभित थी। कमीज के खुले गले में पुष्ट गर्दन चमक रही थी। लाल सुर्ख स्वस्थ चेहरे पर खूब लाल पतले होंठ रंग दिखा रहे थे। एसेम्बली भवन में आज अपार भीड़ थी। 'पब्लिक सेफ्टी बिल' पर बहस चल रही थी। खूब गरमागरम वातावरण था। इधर बलवन्तसिंह श्रीमती शास्त्री को नारीदर्शक दीर्घा में बैठाकर तीर हो गया। भीड़ अधिक थी। अतः बैठने का स्थान न था। शास्त्रीजी बैठने की परेशानी में उचक-उचककर कार्रवाई देख रहे थे।

इस बीच बलवन्तसिंह अपने साथी बटुकेश्वरदत्त से मिलकर कार्यक्रम की सम्पन्नता में लग गया।

थोड़ी ही देर बाद स्पीकर श्री पटेल की घण्टी बजी। सब लोग आगे बढ़कर कार्रवाई करने लगे। बहस खत्म हो चुकी थी और सदस्यगण थिएटर के पात्रों की भाँति इधर-उधर वोट देने को उठ चले थे। मनोरंजक दृश्य था।

सब लोग ध्यान से देख रहे थे। 'स्पीकर पटेल ने स्थिर गम्भीर स्वर में बिल पर अपना निर्णय दिया और एक क्षण रुके। इसी क्षण एकाएक भयानक धमाके से भवन हिल गया और कोई दो गज लम्बा विद्युतप्रकाश ठीक उसी स्थान पर चमका, जहाँ सरकारी सदस्य बैठे थे। साथ ही ऊपर से खिड़कियों के टुकड़े और धुएँ की एक ओर बौछार दर्शक-दीर्घा पर बरस पड़ी।'

'भवन धुएँ से भर गया। चारों ओर भगदड़ मच गई। गोरे सार्जेंट सबसे पहले उड़नछू हो गए थे। लेडीज गैलेरी में अंग्रेज स्त्रियाँ चीख रही थीं। एक बुढ़िया मेम अपनी ही सीट में उलझकर छाता हाथ में लिए थी, मुँह के बल गिर गई थी। शेष स्त्रियाँ उसे कुचलती हुई बदहवास भाग रही थीं। थोड़ी देर में बम का एक और धमाका हुआ। दूसरे बम प्रहार के बाद दनादन गोलियाँ चलानी शुरू कर दीं। मुख से उद्घोष किया। 'लांग लिव रिवोल्यूशन' और साथ ही बहुत से पर्चे एक साथ हवा में उछाल दिए। धुआँ कम होने पर स्थिति स्पष्ट दिखाई देने लगी।

आचार्य चतुर सेन शास्त्री ने देखा कि एसेम्बली में बम फेंकने पर्दा डालने और नारे लगाने वाले युवक बलवन्त और बटुकेश्वरदत्त ही हैं।

उन्होंने नीचे झाँककर देखा तो सरकार के गृहमंत्री श्री क्रेटाट और पण्डित मोतीलाल नेहरू ही बैठे थे। शेष एसेम्बली हॉल

खाली था। दर्शक दीर्घा में दोनों युवक अचल खड़े थे और 'लांग लिव रिवोल्यूशन' का उद्घोष कर रहे थे। अंग्रेज अफसर उनको पकड़ने आए किन्तु समीप पहुँचने का साहस न हुआ। अन्त में पुलिस की दुविधा समझकर दोनों ने अपने-अपने रिवॉल्वर फेंक दिए और पुलिस अफसरों को समीप आने का इशारा किया।

इस प्रकार इन दोनों महान् क्रान्तिकारियों ने अपने उद्देश्य को पूर्ण करके क्रान्तिकारियों की सुप्त आत्मा को जागृत करते हुए पुलिस के सम्मुख वीरता के साथ आत्मसमर्पण कर दिया। यह बलवन्तसिंह और कोई नहीं, अमर शहीद सरदार भगतसिंह थे।

साभार- कथा साहित्य

पुरुषार्थ की महिमा

ईश्वर प्रबल पुरुषार्थ करने वाले का मित्र होता है। जो अपनी सहायता आप करते हैं ईश्वर उनकी सहायता करता है जो हाथ पर हाथ धरे बैठे रहते हैं उनको सब बुरा मानते हैं और उनकी कोई सहायता नहीं करता। बच्चा जब तक अपने आप नहीं चलता उसे चलना नहीं आता। जब तक तुम स्वयं पढ़ना नहीं सीखते, तुम्हें विद्या नहीं आ सकती, तुम विद्वान् नहीं कहला सकते। प्रत्येक आदमी को अपने आप पुरुषार्थ करना सीखना चाहिए। पुरुषार्थ करने वाला पुरुष कहने का अधिकारी होता है। पुरुषार्थहीन आदमी सदा जीवन की दौड़ में पीछे रह जाता है। उसको बल बुद्धि और गुण प्राप्त नहीं होते। पुरुषार्थ द्वारा लोग भिखारी से भगवान बन जाते हैं। अमरीका का राष्ट्रपति हरबर्ट हूवर वह बचपन में एक अनाथ बालक था। अपने पुरुषार्थ से वह एकदिन अमेरिका का राष्ट्रपति बन गया। तुमने रेम्जे मैकडानल्ड का नाम सुना होगा यह महाशय इंग्लैंड के प्रधानमंत्री बनगए थे वह भी अपने पुरुषार्थ की शक्तिसे। मजदूर से महामंत्री बने थे। अतः निरन्तर परिश्रम करते रहो तभी परमात्मा तुम्हारा सहायक होगा। राम वनवास में अकेले थे परन्तु उन्होंने अपने परिश्रम से साधनों को जुटाया और लंकापति पर विजय प्राप्त कर ली। कृष्ण ने अपने परिश्रम के बल से कंस जैसे महाबली को जीत लिया था। बात यह है कि उनके परिश्रम में भी ईश्वर उनका साथ देते थे। हमारे परिश्रम में भी ईश्वर हमारा साथ देगा। अतः परिश्रम करो, परिश्रम करो।

साभार- उपदेशामृत

आर्यरत्न डॉ. ओमप्रकाश (म्यॉंमार) स्मृति पुरस्कार

''सत्यार्थ-भूषण'' पुरस्कार

₹ 5100

कौन बनेगा विजेता

- न्यास की मासिक पत्रिका सत्यार्थ सौरभ का सदस्य होना आवश्यक है।
- हल की हुयी पहेली अन्तिम तिथि से पूर्व न्यास कार्यालय में पहुँचे यह सुनिश्चित करें।
- अपना सत्यार्थ सौरभ सदस्यता क्रमांक हल की हुयी पहेली के ऊपर अवश्य अंकित करें।
- लिफाफे के ऊपर 'सत्यार्थप्रकाश पहेली क्रमांक' अवश्य अंकित करें।
- आयु, लिंग, योग्यता की कोई बाधा नहीं। आबाल-वृद्ध, नर-नारी, छोटे-बड़े सभी पात्र हैं।
- विश्व भर के लोगों से सत्यार्थ सौरभ मासिक पत्रिका के अन्तर्गत 'सत्यार्थकाश पहेली' में भाग लेने का अनुरोध है।
- वर्ष भर में एक (१) के स्थान पर चार (४) पुरस्कारों के साथ ही नियमों में सकारात्मक परिवर्तन कर ऐसी व्यवस्था की गई है कि वर्ष में एक बार भाग लेने वाले/अथवा एक बार ही सफलता प्राप्त करने वाले भी पुरस्कार से वंचित न हों।
- पहेली का सही हल प्रेषित करने वाले प्रतिभागियों को ४ भागों में विभक्त किया जावेगा।
  - (अ) सम्पूर्ण वर्ष में समस्त १२ पहेलियों का शुद्ध उत्तर प्रेषित करने वाले।
  - (ब) सम्पूर्ण वर्ष में ८ से ११ पहेलियों का शुद्ध उत्तर प्रेषित करने वाले।
  - (स) सम्पूर्ण वर्ष में ५ से ७ पहेलियों का शुद्ध उत्तर प्रेषित करने वाले।
  - (द) सम्पूर्ण वर्ष में १ से ४ पहेलियों का शुद्ध उत्तर प्रेषित करने वाले।
- वर्षान्त में प्रत्येक समूह में से एक विजेता का चयन (लाट्री द्वारा) किया जाकर पुरस्कृत किया जावेगा।
- पुरस्कार राशि क्रमशः ₹५१००, ₹११००, ₹७०० तथा ₹५०० होगी। अन्य सभी नियम पूर्वानुसार।

₹5100 का पुरस्कार प्राप्त करें ''सत्यार्थ सौरभ'' के सदस्य बनें

अविलम्ब बहुप्रशंसित पत्रिका 'सत्यार्थ सौरभ' के सदस्य बनें, जो पहले से सदस्य हैं अपना नवीनीकरण करावें और सत्यार्थ सौरभ में छप रही 'सत्यार्थप्रकाश पहेली' में भाग लेने की पात्रता प्राप्त करें और पावें ₹5100 का पुरस्कार।

पूर्ण विवरण इसी पृष्ठ पर देखें।

स्वास्थ्य

बस एक गोली व्यायाम की छुट्टी

विज्ञान बड़ी तेजी से विस्तार कर रहा है। आधुनिक चिकित्सा विज्ञान की कोई कितनी भी आलोचना कर ले परन्तु इस बात से इनकार नहीं किया जा सकता कि शोध के प्रति उसका उत्साह असीम प्रतीत होता है। शरीर विज्ञान के क्षेत्र में क्या-क्या चमत्कार नहीं किये हैं। शरीर के अन्दर के अंगों की ३डी इमेज रोगों को समझाने में कितनी कारगर हुयी है यह सर्वज्ञात है। उदाहरण के लिए हम व्यायाम की बात कर लें। यह निर्विवाद एवं हजारों शोध कार्यों से प्रमाणित है कि प्रत्येक व्यक्ति को नित्यप्रति व्यायाम करना आवश्यक है। परन्तु वैज्ञानिक यहीं नहीं रुके, उन्होंने यह ज्ञात करने का प्रयास किया कि व्यायाम से शरीर के हारमोन एवं enzymes में क्या अन्तर आता है। उन्होंने पता लगाया कि व्यायाम के मध्य एक ऐसा हरमोन निकलता है जो उस प्रोटीन को कम कर देता है जिससे पार्किन्सन रोग होता है। अब इसका लाभ पार्किन्सन रोग के इलाज में हो सकता है।

आज हम एक ऐसे शोध की बात कर रहे हैं जो बड़ा मजेदार है। अच्छे स्वाथ्य की कुंजी exercise है, यह सर्वमान्य है। प्रति सप्ताह कुछ घण्टों का व्यायाम आपको स्वस्थ तथा निरोग रखने में और आपकी रोग प्रतिरोधक क्षमता बनाने में कारगर है। परन्तु वैज्ञानिकों को इतने से संतोष नहीं हुआ, वे शोध करने में लग गए कि आखिर व्यायाम करने से शरीर में क्या परिवर्तन होते हैं जिनके कारण ये लाभ प्राप्त होते हैं। नतीजा यह हुआ कि वैज्ञानिकों ने उस दवा का आविष्कार किया है जिसे लेने से शरीर में वही इच्छित परिवर्तन होते हैं जो व्यायाम से होते हैं वैज्ञानिकों ने जो दवा तैयार की है उसे लेने पर शरीर में वही सकारात्मक परिवर्तन होंगे जो व्यायाम से होते हैं। इस दवा का नाम locamidazole (LAMZ) है। अभी यद्यपि यह परीक्षण स्टेज में है। अभी इसका प्रयोग चूहों पर चल रहा है। अभी मानव के उपयोग हेतु, अधिकृत एजेंसियों द्वारा सुरक्षित घोषित करने तक बहुत सारे सोपान हैं। हो सकता है कि यह उस सोपान तक पहुँचे ही नहीं परन्तु यदि सब कुछ हो जाता है और इस दवा को एप्रूवल मिल जाता है तो क्या व्यायाम के स्थान पर एक गोली लेना पर्याप्त होगा?

वैज्ञानिकों का कहना है कि यह शोध इस हेतु नहीं है। व्यायाम व्यायाम ही है। उसका विकल्प यह दवा नहीं है। परन्तु अनेक स्थितियाँ ऐसी होती हैं जहाँ व्यक्ति अनेक कारणों से व्यायाम करने योग्य नहीं होता है। लकवा ग्रस्त, गम्भीर बीमारी के कारण लम्बे समय तक बिस्तर पर रहने वाला तथा वृद्धावस्था ऐसे उदाहरण हैं जहाँ व्यायाम किये बिना एक गोली खाइए और व्यायाम के सकारात्मक लाभ पाइए। यह तर्क उचित है। वास्तव में उक्त या ऐसी ही अन्य स्थितियों में यह दवा वरदान सिद्ध होगी।

पर यह भी है आलसियों की दुनिया में जब ऐसी दवा होगी तो कोई मेहनत क्यों करेगा? बस एक गोली गटकी और आधा घण्टे की दौड़ का लाभ। जो भी हो। अभी तो सब कुछ भविष्य के गर्भ में है। दवा मनुष्य पर परीक्षण किये जाने पर यही परिणाम दे सकेगी अथवा फिस्स हो जायेगी कहा नहीं जा सकता, सफलता मिल जाय पर उसे मानव हेतु सुरक्षित नहीं पाया जाय, यह भी हो सकता है।

जो भी हो जिनके मन में लड्डू फूट रहे हैं कि बस यह दवा आ जाय तो व्यायाम का झंझट समाप्त, उनसे तो अभी यही कहा जा सकता है कि अभी दिल्ली दूर है।

साभार- अन्तर्जाल

समाचार

श्री सुरेन्द्र कुमार रैली आर्य केन्द्रीय सभा दिल्ली के प्रधान निर्वाचित

'आर्य केन्द्रीय सभा दिल्ली राज्य' का साधारण सभा अधिवेशन एवं त्रिवार्षिक निर्वाचन रविवार, दिनांक १८ सितम्बर २०२२ को दिल्ली प्रदेश की समस्त आर्य समाजों से आए प्रतिनिधियों की भारी उपस्थिति में आर्य समाज, हनुमान रोड़ के सभागार में पूर्ण सौहार्द्र पूर्ण वातावरण में सम्पन्न हुआ जिसमें प्रसिद्ध लेखक एवं शिक्षाविद् श्री सुरेन्द्र कुमार रैली जी को सर्वसम्मति से प्रधान निर्वाचित किया गया।

श्री रैली जी ने उपस्थित जन समुदाय का हृदय की अनन्त गहराइयों से आभार व्यक्त किया तथा सभी से आर्य समाज के कार्यों को और अधिक गति देने के लिए सहयोग देने के लिए आग्रह किया।

आर्य समाज रानी बाग व प्रशान्त विहार का वार्षिकोत्सव सम्पन्न

सोमवार १० अक्टूबर २०२२, आर्य समाज रानी बाग व प्रशान्त विहार, दिल्ली का वार्षिकोत्सव सम्पन्न हुआ। करोना काल के बाद यह पहला कार्यक्रम था जिसमें लोगों ने उत्साह के साथ भाग लिया।

विशिष्ट अतिथि केन्द्रीय आर्य युवक परिषद् के राष्ट्रीय अध्यक्ष अनिल आर्य ने कहा कि समाज में बढ़ता पाखण्ड और अंधविश्वास आर्य समाज के लिए चुनौती है, पहले से अधिक यह बढ़ रहा है। पढ़े-लिखे लोग भी इसके मायाजाल में फंस जाते हैं। आज आर्य समाज की आवश्यकता पहले से कहीं अधिक बढ़ गई है। देश की विषम परिस्थितियों में हिन्दू समाज को संगठित होने की आवश्यकता है, तभी आने वाली चुनौतियों का सामना कर पायेंगे। आर्य समाज एक जनान्दोलन है समाज की समस्याओं के साथ जुड़ कर ही उसका निराकरण सम्भव है।

आचार्या विमलेश बंसल व आचार्य उषर्बुद्ध ने जीवन निर्माण के सूत्र समझाये और सात्विक सतोगुणी बनने का आह्वान किया।

स्वर्ण सेतिया, अनुराधा के मधुर भजन हुए। प्रधान सोमनाथ पुरी, धर्मपाल परमार ने अभार व्यक्त किया। संचालन मैथिली शर्मा व नरेन्द्र कस्तूरिया ने किया।

प्रमुख रूप से अवधेश आर्य, श्यामपाल आर्य, शिव नारायण शास्त्री, मदन अरोडा, रेखा शर्मा, उर्मिला आर्य, संगीता आर्य, संजय सेतिया, माला शर्मा, सुनील गुप्ता, देवेन्द्र दहिया, सुरेन्द्र गुप्ता, सोहन लाल मुखी, अंजू जावा, शशिकान्ता, कृष्णा पाहुजा, यशपाल चावला, करुणा चांदना, महेन्द्र पाल अरोडा, कृष्णा सपरा, सोहनलाल आर्य आदि उपस्थित थे।

– प्रवीण आर्य, मीडिया प्रभारी

आर्य समाज एवं नील फाउण्डेशन की ओर से प्रशासनिक परीक्षाओं में आई.ए.एस, आई.पी.एस, आई.एफ.एस की निशुल्क तैयारी के लिए जे.बी.एम के प्रमुख सुरेन्द्र कुमार आर्य जी की अध्यक्षता में रघुमल आर्य कन्या विद्यालय कनाट प्लेस, दिल्ली में प्रतिभागी एकत्रीकरण कार्यक्रम का आयोजन किया गया। जिसमें देश भर से २५० प्रतियोगी छात्र-छात्राओं ने भाग लिया। सभाध्यक्ष सुरेन्द्र आर्य ने कहा राष्ट्र की उन्नति सुव्यवस्था के लिए न्यायपालिका, कार्यपालिका, विधायका के उच्च पदों पर आसीन व्यक्ति ही नीति निर्धारित करते हैं। देश के योग्य प्रशासनिक अधिकारी संस्कारवान, सामाजिक उन्नति में सहायक होते हैं। आर्य समाज योग्य प्रतियोगियों को प्रोत्साहित करता रहेगा। इस

अवसर पर सुशील राज आर्य प्रतिभा विकास केन्द्र के अध्यक्ष राजकुमार आई.ए.एस मनेन्द्र गोयल, संदीप जिन्दल, आशीष चन्द्रा, बी.बी गुप्ता, राजीव तलवार, एस.एन आर्य, सभामंत्री विनय आर्य, सतीश चड्डा-महासचिव आर्य केन्द्रीय सभा दिल्ली, दयानन्द सेवाश्रम संघ के महामंत्री श्री जोगिंदर खट्टर, उमा शशि दुर्गा ने प्रेरक विचार रखे। कार्यक्रम को सफल बनाने के लिए मनीष भाटिया, संजय आर्य, राकेश आर्य, बृहस्पति आर्य, अजय कालरा का योगदान रहा।

गुरुकुल मंझावली का रजत जयन्ती समारोह सम्पन्न

फरीदाबाद स्थित यमुना तट गुरुकुल मंझावली के २५ वर्ष पूरे होने पर रजत जयन्ती समारोह के उपलक्ष्य में गुरुकुल के द्वारा विभिन्न प्रतियोगिताओं का आयोजन किया गया। जहाँ गुरुकुल प्रभात आश्रम, मेरठ के दिगम्बर और हर्ष ने पाणिनीय अष्टाध्यायी प्रतियोगिता में प्रथम स्थान प्राप्त कर गुरुकुल की परम्परा के मान को बढ़ाया, वहीं यशमोहन और उमाशंकर ने पाणिनीय त्रिपाठी (धातुपाठ, उणादिकोश, लिंगानुशासन) श्रावण प्रतियोगिता में प्रथम स्थान प्राप्त कर गुरुकुल की कीर्ति को बढ़ाया। इसके साथ ही सामवेद संहिता श्रावण प्रतियोगिता में शिवांश ने प्रथम स्थान प्राप्त कर गुरुकुल की वेद परम्परा को अग्रसारित करते हुए यशःपताका को बढ़ाया है। गुरुकुल प्रभात आश्रम, मेरठ की द्वितीय शाखा गुरुकुल नवप्रभात आश्रम, उड़ीसा से आए गौरव और सुदय ने अष्टाध्यायी प्रतियोगिता मे प्रथम स्थान प्राप्त कर गुरुकुल परम्परा की कीर्ति का संवर्धन किया। समस्त गुरुकुल परिवार ने सभी विद्यार्थियों का स्वागत किया। गुरुकुल प्रभात आश्रम के पूज्य कुलाधपति जी ने सभी के उज्ज्वल भविष्य की कामना की और सभी को आशीर्वाद प्रदान किया।

आर्य महासम्मेलन कलकत्ता

राष्ट्र पितामह महर्षि दयानन्द सरस्वती जी महाराज १६ दिसम्बर सन् १८७२ को प्रथम बार कलकत्ता पधारे थे और १६ अप्रैल १८७२ तक बंगाल में चार मास तक प्रवास किया। इस वर्ष सन् २०२२ में महर्षि के बंगाल प्रवास के १५० वर्ष पूर्ण हो रहे हैं। इस महनीय वेला को क्रान्तिकारियों के प्रेरणा स्रोत को श्रद्धांजलि समर्पित करने के उद्देश्य से आर्य समाज कलकत्ता के नेतृत्व में बंगाल की सभी समाजें संयुक्त रूप से आर्य महासम्मेलन दिनांक ३० दिसम्बर २०२२ से १ जनवरी २०२३ तक आयोजन कर रही है। अतः इस महनीय व यादगार सुअवसर पर अधिकाधिक संख्या में सहभागी बनें।

हलचल

त्रिदिवसीय वेद प्रचार कार्यक्रम सम्पन्न

आर्य समाज, हिरण मगरी-सेक्टर ४ में त्रिदिवसीय वेद प्रचार कार्यक्रम दिनांक ७ अक्टूबर २०२२ से प्रारम्भ होकर दिनांक ९ अक्टूबर २०२२ को सम्पन्न हुआ।

इस पुनीत अवसर पर जहाँ प्रति सत्र श्री इन्द्रप्रकाश यादव एवं सरला

गुप्ता के पौरोहित्य में देवयज्ञ सम्पादित होता था, वहीं प्रसिद्ध विद्वान् डॉ. सोमदेव शास्त्री तथा साध्वी उत्तमायति के, विभिन्न प्रेरक विषयों पर सारगर्भित प्रवचनों ने श्रोताओं को मन्त्रमुग्ध कर दिया। पंडित श्री इन्द्रदेव जी पीयूष ने अपने मधुर स्वर में भजन प्रस्तुत किए। आर्य कन्या गुरुकुल, राजेन्द्र नगर-नई दिल्ली की अधिष्ठात्री एवं सार्वदेशिक आर्य वीरांगना दल की प्रधान संचालिका साध्वी उत्तमा यति जी ने वेद मंत्र की व्याख्या करते हुए जीवन में सदैव सत्य को बोलना और व्यवहार में लाने का आह्वान किया। पद्मिनी आर्ष कन्या गुरुकुल, चित्तौड़गढ़ के अधिष्ठाता एवं वैदिक मिशन मुम्बई के अध्यक्ष आचार्य डॉ. सोमदेव जी शास्त्री ने महापुरुषों के जीवन के प्रसंगों का उदाहरण देते हुए सत्य को मन, वचन एवं कर्म से जीवन जीने का उपदेश दिया। उन्होंने यजुर्वेद के मंत्र विश्वानि देव .... की व्याख्या करते हुए स्पष्ट किया कि परमपिता परमात्मा हमारे जीवन से सम्पूर्ण दुर्गुण, दुर्व्यसन और दुखों को दूर करें और कल्याण कारक गुण, कर्म, स्वभाव और पदार्थ हमें प्राप्त करावें।

इस अवसर पर श्रीमद् दयान्द सत्यार्थ प्रकाश न्यास के अध्यक्ष अशोक आर्य, मंत्री-भवानी दास आर्य, पिछोली आर्य समाज से डॉ. प्रेम चन्द जी गुप्ता, प्रकाश जी श्रीमाली का प्रमुख सान्निध्य प्राप्त हुआ। कार्यक्रम का संचालन मंत्री श्रीमती ललिता मेहरा ने किया तथा सभी अतिथियों का स्वागत भँवरलाल आर्य ने एवं धन्यवाद अमृत लाल तापड़िया ने किया।

- ललिता मेहरा- मंत्री

वेद कला संवर्धन संगोष्ठी सम्पन्न

यजमान यज्ञ की अग्नि को समिधा, घृत और सामग्री के द्वारा उत्तरोत्तर बढ़ाता है उसी प्रकार यज्ञ उस यजमान की जीवन ज्योति को बढ़ाने के साथ-साथ सुख शान्ति और ऐश्वर्य की वृष्टि कर यजमान की अभीष्ट कामनाओं को पूर्ण करता है। इसलिए वेद कहता है जीवन में सुख, शान्ति, ऐश्वर्य, लक्ष्मी, कीर्ति आदि की बढ़ती चाहे तो यज्ञ एक मात्र विधि है। यज्ञ मनुष्य को ऋण से उऋण करा स्वर्ग प्राप्त कराता है। आज श्री वेदकला संवर्धन परमार्थ न्यास की द्वितीय वर्षगांठ के अवसर पर आयोजित वेद कला संवर्धन संगोष्ठी में ग्वालियर से पधारे आचार्य चन्द्रशेखर शर्मा जी ने उपरोक्त वचन अपने अद्भुत और दिव्य व्याख्यान में कहे।

कार्यक्रम की अध्यक्षता पूर्व लोकायुक्त श्रीमान् सज्जन सिंह कोठारी जी कर रहे थे। उन्होंने अपने आशीर्वचन में आचार्य जी के व्याख्यान की भूरि-भूरि प्रशंसा की। कार्यक्रम का प्रारम्भ द्विकुण्डीय यज्ञ से हुआ। ब्रह्मा आचार्य चन्द्रशेखर शर्मा जी ने महिला आर्य समाज, मानसरोवर की मंत्राणि श्रीमती सुधा एवं श्री सतीश मित्तल की सुपौत्री के जन्म दिवस पर आशीर्वचन कहे।

श्री वेद कला संवर्धन परमार्थ न्यास के सहसंयोजक अवनीश मैत्रि: ने न्यास की गत वर्ष की गतिविधियों पर दृष्टिपात कराते हुए आगामी योजनाओं को सबके समक्ष रखा। ऋषि दयानन्द की २००वीं जन्म जयन्ती और पूज्यपाद आर्यमुनि वेदमित्र जी की सौ वीं जन्म जयन्ती के अवसर पर जयपुर में एक भव्य ऋषि कथा का आयोजन करने का संकल्प प्रकट किया। इस अवसर पर अनुकम्पा दिव्य सत्संग के श्रीमान् देवेश एवं सीमा गोयल जी, एनडीपीएस विद्यालय के निदेशक श्री सांवरमल जाट जी, जयपुर शहर में दैनिक यज्ञ प्रकाश की ५०० पुस्तिका का निशुल्क वितरण करने वाले न्यास के सहयोगी श्रीमान् मुकेश अग्रवाल, देवेश अग्रवाल जी का स्मृति चिह्न देकर एवं पटका पहनाकर स्वागत किया गया।

इस समारोह में वर्तमान संरक्षक एवं प्रधान रहे मानसरोवर आर्य समाज के श्रीमान् अर्जुन देव कालरा जी का न्यास के अध्यक्ष शिव प्रकाश शास्त्री ने शॉल और स्मृति चिह्न से सम्मान किया।

कार्यक्रम में जयपुर के विद्वान् डॉक्टर कृष्ण पाल सिंह जी, आर्य समाज मोती कटला के प्रधान श्री अशोक शर्मा जी, आर्य समाज जनता कॉलोनी के मंत्री गुप्ता जी, मानसरोवर आर्य समाज के समस्त पदाधिकारी गण, आर्य समाज सांगानेर के प्रधान श्री आर. सी. मंगल एवं समस्त पदाधिकारी गण, एवं अन्यान्य संस्थाओं से जुड़े जयपुर के गणमान्य आर्य जन उपस्थित रहे।

सभी पधारे हुए महानुभावों का श्री वेदकला संवर्धन परमार्थ न्यास एवं मैत्रि: परिवार हार्दिक आभार एवं धन्यवाद प्रकट करता है।

- अवनीश मैत्रि:

सत्यार्थ प्रकाश पहेली - ०६/२२ के विजेता

सत्यार्थ प्रकाश पहेली- ०६/२२ के चयनित विजेताओं के नाम इस प्रकार हैं- श्री रतन लाल राजोरा; निम्बाहेड़ा (राज.), श्री पुरुषोत्तम मेघवाल; उदयपुर (राज.), श्रीमती सुनीता सोनी; बीकानेर (राज.), श्रीमती रूपादेवी सोनी; बीकानेर (राज.), प्रधान आर्य समाज; बीकानेर (राज.), श्रीमती उषादेवी सोनी; बीकानेर (राज.), श्री महेश चन्द्र सोनी; बीकानेर (राज.), श्री हर्षवर्द्धन आर्य; नवादा (बिहार), श्री इन्द्रजीत् देव; यमुनानगर (हरियाणा), श्रीमती कंचन देवी सोनी; बीकानेर (राज.), डॉ. राजबाला कादियान; करनाल (हरियाणा), श्री हीरालाल बलाई; उदयपुर (राज.), श्री फूलचन्द यादव; मुरादनगर (उ. प्र.), श्री गोपाल राव; निम्बाहेड़ा (राज.), श्री आर. सी. आर्य; कोटा (राज.), श्री रमेश चन्द्र राव; मन्दसौर (म. प्र.), श्रीमती कमलकान्ता सहगल; पंचकूला (हरियाणा)।

सत्यार्थ सौरभ के उपर्युक्त सभी सुधी पाठकों को हार्दिक बधाई।

ध्यातव्य- पहेली के नियम पृष्ठ 26 पर अवश्य पढ़ें।

सत्यार्थ-पीयूष

ईश्वर और ईश्वरकृत पुस्तक (कसौटी)

वेद की भाषा के सम्बन्ध में महर्षिवर देव दयानन्द सत्यार्थ प्रकाश के सप्तम समुल्लास में लिखते हैं- 'जो किसी देशभाषा में प्रकाश करता तो ईश्वर पक्षपाती हो जाता क्योंकि जिस देश की भाषा में प्रकाश करता उसको सुगमता और विदेशियों को कठिनता वेदों को पढ़ने-पढ़ाने की होती। इसलिए संस्कृत में ही प्रकाश किया, जो किसी देश की भाषा नहीं और वेद भाषा अन्य सब भाषाओं का कारण है उसी में वेदों का प्रकाश किया। जैसे ईश्वर की पृथिवी आदि सृष्टि सब देश और देशवालों के लिए एकसी और सब शिल्प विद्याओं का कारण है। वैसे परमेश्वर की विद्या की भाषा भी एकसी होनी चाहिए कि सब देश वालों को पढ़ने पढ़ाने में तुल्य परिश्रम होने से ईश्वर पक्षपाती नहीं होता। और सब भाषाओं का कारण भी है।'

वेद ज्ञान किस प्रकार दिया गया

अब प्रायः एक शंका उपस्थित की जाती है कि जब परमेश्वर निराकार उसके मुखादि अवयव नहीं हैं तो उसने वेद ज्ञान मनुष्यों को किस प्रकार दिया? क्योंकि पढ़ाने तथा सिखाने में मुख (वाणी) की आवश्यकता होती है। उसका समाधान यह है कि वाणी से शब्दोच्चारण की आवश्यकता अपने से भिन्न व्यक्ति को बोध कराने हेतु होती है। जब व्यक्ति मन ही मन में बात करता है अर्थात् उसके अपने अन्दर ही संकल्प विकल्प प्रश्नोत्तरादि चलते रहते हैं तो क्या वाणी का व्यवहार होता है?नहीं। एक बात और विचारणीय है कि दूरस्थ व्यक्ति को सम्बोधित करने हेतु हमें जोर से अथवा लाउडस्पीकर आदि से बोलना पड़ता है पर जब वही व्यक्ति बिल्कुल पास आ जाता है तो उसे कहने का रूप फुसफुसाहट जैसा हो जाता है। परन्तु परम पिता परमात्मा तो सर्वव्यापक है,

वेद ज्ञान किस प्रकार दिया गया ?

उद्गा आजदग्निरोभ्य आविष्क्रृण्वन्गुहा सती:।
अर्वाञ्चं नुनुदे वलम्॥ - ऋग्वेद ८/१४/८

प्रत्येक कल्प के आदि में, प्रभु अपने अन्तर्निहित वेद ज्ञान को ऋषियों के हृदय में उदित करते हैं। जिस प्रकार सूर्योदय से अन्धकार नष्ट होता है उसी प्रकार वेदोदय से अज्ञान नष्ट होता है।

जीवात्मा में व्याप्त है अतः मध्यमा वाक् (जिसमें उच्चारण नहीं होता) में उपदेश ऋषियों के आत्मा में प्रदान कर दिया इसमें क्या आश्चर्य है? जो सर्वशक्तिमान परमात्मा अपने असीम सामर्थ्य से बिना हाथ पैर के अनन्त ब्रह्माण्ड की रचना करता है, उसके लिए बिना वाणी के ऋषियों के मस्तिष्क में ज्ञान का संक्रमण करना अत्यन्त साधारण बात है। महर्षि दयानन्द सत्यार्थ प्रकाश में लिखते हैं- 'परमेश्वर के सर्वशक्तिमान और सर्वव्यापक होने से जीवों को अपनी व्याप्ति से वेद विद्या के उपदेश करने में कुछ भी मुखादि की अपेक्षा नहीं है, क्योंकि मुख, जिह्वा से वर्णोच्चारण अपने से भिन्न को बोध होने के लिए किया जाता है कुछ अपने लिए नहीं क्योंकि मुँख, जिह्वा के व्यवहार करे बिना ही मन में अनेक व्यवहारों का विचार और शब्दोच्चारण होता रहता है। कानों को अंगुलियों से मूंद के देखो, सुनो कि बिना मुख, जिह्वा ताल्वादि स्थानों के कैसे कैसे शब्द हो रहे हैं। वैसे जीवों को अन्तर्यामिरूप से उपदेश किया है, किन्तु केवल दूसरों को समझाने के लिए उच्चारण करने की आवश्यकता है। जब परमेश्वर निराकार सर्वव्यापक है तो अपनी अखिल वेद विद्या का उपदेश जीवस्थ स्वरूप से जीवात्मा में प्रकाशित कर देता है। फिर वह मनुष्य अपने मुख से उच्चारण करके दूसरों को सुनाता है।

(सत्यार्थ प्रकाश सप्तम समुल्लास)

वेदों का अर्थ कैसे ज्ञात हुआ ?

एक प्रश्न यह उपस्थित होता है कि आदि मानव वेदभाषा से परिचित न थे फिर अग्नि आदि ऋषियों ने वेदों का अर्थ कैसे जाना? इसका समाधान करते हुए ऋषि लिखते हैं-

'परमेश्वर ने जनाया और धर्मात्मा योगी, महर्षि लोग जब जब जिस जिसके अर्थ को जानने की इच्छा करके ध्यानावस्थित हो परमेश्वर के स्वरूप में समाधिस्थ हुए तब तब परमात्मा ने अभीष्ट मंत्रों के अर्थ जनाए। (सत्यार्थ प्रकाश-सप्तम समुल्लास) जिस परम दयालु, सर्वज्ञ, सर्वशक्तिमान ईश्वर ने ज्ञान दिया, भाषा दी उसी ने अर्थों को जनाया इसमें क्या आश्चर्य है? अगर वह अर्थों को न बताता तो ज्ञान किस काम का था।

- अशोक आर्य
सत्यार्थ प्रकाश भवन, नवलखा महल, गुलाब बाग

Festive Greetings
Dollar
Missy
CHIC CASUALS
CHURIDAR | ANKLE LENGTH | CAPRI
CARRY ON MISSY
CAPRI
CHURIDAR
ANKLE LENGTH
| www.dollarglobal.in | Buy Online: www.dollarshoppe.in | Also available at all leading shopping portals
Dollar products are available in over 800 cities/towns and 100,000 MBOs across India | Govt. Certified STAR EXPORT HOUSE

RNI Registration No. RAJHIN/2012/47777 November-2022 Postal Registration No. RJ/UD/29-107/2021-2023

जब वह पेड़ ज्ञानदाता और अमर करने वाला था तो उसके फल खाने से क्यों वर्जा? और जो वर्जा तो वह ईश्वर झूठा और बहकाने वाला ठहरा। क्योंकि उस वृक्ष के फल मनुष्यों को ज्ञान और सुखकारक थे, अज्ञान और मृत्युकारक नहीं। जब ईश्वर ने फल खाने से वर्जा तो उस वृक्ष की उत्पत्ति किसलिये की थी? जो अपने लिए की तो क्या आप अज्ञानी और मृत्युधर्मवाला था? और दूसरों के लिये बनाया तो फल खाने में अपराध कुछ भी न हुआ।

सत्यार्थ प्रकाश समुल्लास ४६८ पृष्ठ

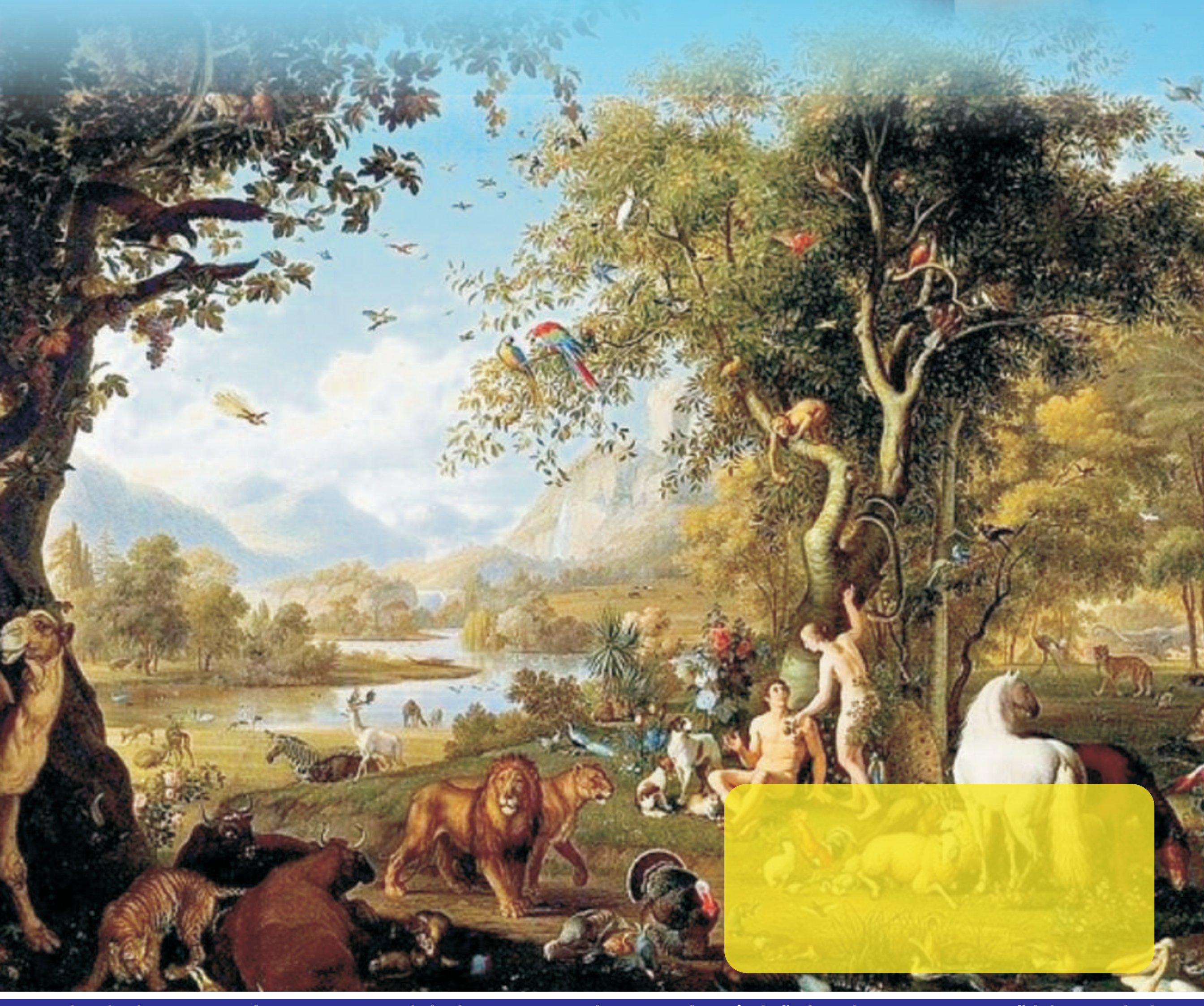

स्वत्वाधिकारी, श्रीमद्दयानन्द सत्यार्थप्रकाश न्यास, उदयपुर की ओर से प्रकाशक, मुद्रक अशोक कुमार आर्य द्वारा चौधरी ऑफसेट प्रा. लि., 11/12 गुरुरामदास कॉलोनी, उदयपुर से मुद्रित
प्रेषण कार्यालय- श्रीमद्दयानन्द सत्यार्थप्रकाश न्यास, नवलखा महल, गुलाबबाग, महर्षि दयानन्द मार्ग, उदयपुर-313001 से प्रकाशित, सम्पादक-अशोक कुमार आर्य

मुद्रण दिनांक- प्रत्येक माह की ३ तारीख	प्रेषण दिनांक- प्रत्येक माह की ७ तारीख	प्रेषण कार्यालय- मुख्य डाकघर, चेतक सर्कल, उदयपुर